चन्दामामा
जुलाई १९७५
1
रु०

Photo by: **SAMBHU MUKHERJEE**

CHARMER

मैं गंदे पैरों से भला प्लूटो को अन्दर कैसे लाता?
HT-HSI 8124 R
अन्तर्राष्ट्रीय गुणमान के
अनुरूप निर्मित सैनेटरीवेयर
और वॉल टाइल
VITREOUS
हिन्दुस्तान सैनेटरीवेयर
एण्ड इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड
२ वेलेसली प्लेस, कलकत्ता ७००००१
सोमानी-पिल्किंगटन्स लिमिटेड
कसार, रोहतक, हरियाना

चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'

इस संसार में कुछ लोग स्वार्थी होते हैं, निस्वार्थियों के द्वारा ही उनका स्वार्थ सिद्ध होता है। दो स्वार्थियों के बीच ही सदा संघर्ष होता रहता है। स्वार्थी तथा निस्वार्थियों के बीच कभी संघर्ष नहीं होता। इस महीने की बेताल कथा के द्वारा हमें यही सत्य विदित होता है। किंतु स्वार्थी लोग कैसे दण्ड पाते हैं, यह बात हमें "असली चोर" तथा "सच्चा भक्त" नामक कहानियों द्वारा विदित होती है।

वर्ष : २८ जुलाई १९७५ अंक : १

मित्र-भेद

[२४]

वधू ने यह कहानी सुनाकर कहा– "इसलिए कोई अपनी क़िस्मत को बदल नहीं सकता। यदि मैं इस सर्प के साथ विवाह न करूँगी तो मेरे पिता सौ कन्याओं का वध करने के पाप का भागी होगा।"

इसके बाद उस युवती ने सर्प के साथ वैभवपूर्वक विवाह किया और बड़ी श्रद्धा के साथ अपने पति की सेवा करने लगी।

एक दिन वह सर्प अपनी पिटारी से बाहर आया और दिव्य सुंदर मानव के रूप में अपनी पत्नी की बगल में आ बैठा। इसे देख वह चकित हो गई। उसको पराया पुरुष जानकर किवाड़ खोल बाहर की ओर भागने को हुई। "प्रेयसी! भागो मत! मैं तुम्हारा पति हूँ।" उस पुरुष ने कहा।

इसके बाद उस युवती को विश्वास दिलाने के हेतु वह पुरुष पिटारी में निर्जीव पड़े साँप के भीतर प्रवेश कर गया। थोड़ी देर फन फैलाकर अपने सजीव होने का सबूत दिया और फिर मानव के रूप में बाहर आ गया। अपने पति को मानव रूप में देख वह युवती बहुत खुश हो गई और अपने पति के सिर पर किरीट तथा शरीर पर आभूषणों को देख उसे प्रणाम किया। जब वे दोनों सो गये, तब देवशर्मा ने पता लगाया कि उसका दामाद मानव है, तब उसने पिटारी में से साँप को ले जाकर जला डाला।

यह कहानी सुनाकर बलभद्र ने कहा– "महाराज! यदि हम मठ के साथ इस महात्मा के शरीर को भी जला डालेंगे तो वे सदा देवता के शरीर में ही रह जायेंगे।"

अंतिम पृष्ठ का चित्र

राजा ने स्वीकृति दी। बलभद्र ने मठ को जलवा डाला। मठ के साथ कपट सन्यासी जलकर राख हो गया। यों सुनाकर करटक ने कहा–"इसलिए तुम अपनी खतरनाक इस साज़िश को रहने दो।"

इसके उत्तर में दमनक ने कहा–"तुम्हारी यह बात निरर्थक है। तुम जो जो सिद्धांत सुना रहे हो, वे मेरे आचरण के समक्ष किसी काम के नहीं हैं। इतना ही क्यों? हम इस बैल के शरीर को लेकर कई महीने जी सकते हैं। उसका कलेवर अभी मेरी आँखों के सामने स्पष्ट झलक रहा है, मगर चालाक सियार की भाँति हमारी चाल के चलने तक इस बात को तुम गुप्त रखो।"

"वह कैसी कहानी है?" करटक ने पूछा। दमनक ने यों जवाब दिया :

चालाक सियार

एक जंगल में वज्रदंष्ट्र नामक एक सिंह था। उसके यहाँ तीन मंत्री थे–चमरक नामक सियार, एक भेड़िया और एक ऊँट! एक दिन सिंह एक नर हाथी के साथ भयंकर युद्ध करके घायल हो गया। इस कारण वह अपनी गुफा में पीड़ा का अनुभव करते, भूख-प्यास से तड़पते पड़ा रहा। वह शिकार खेलने जा नहीं पाया। उस हालत में सिंह ने अपने मंत्रियों को

बुलाकर कहा–"मैं भूख के मारे मरा जा रहा हूँ। तुम लोग किसी जानवर का शिकार करके यहाँ पर ले आओ।"

उन जानवरों ने बड़ी कोशिश की, पर उन्हें कोई शिकार न मिला।

इस पर चमरक नामक सियार ने अपने मन में सोचा–"इस ऊँट को किसी उपाय से मार डालने पर हम सब थोड़े दिन निश्चित भर पेट खाना खा सकते हैं। मगर वह सिंह का मित्र तथा मंत्री है, इसलिए ऊँट का वध करने को वह तैयार न होगा। इसलिए मैं कोई ऐसा उपाय करूँगा जिस से ऊँट अपनी मृत्यु के लिए स्वीकृति दे सके।" यों सोचकर सियार

ने ऊँट से कहा–"दोस्त! हमारे मालिक बिना खाने के भूख से तड़प कर मरते जा रहे हैं। हमारे मालिक के मरने पर हमारी मौत भी निश्चित है। इसलिए मैं एक ऐसा सुझाव दूंगा जिस से हमारे मालिक तथा तुम्हारा भी लाभ हो!"

"निस्संकोच बताओ। तुम्हारे सुझाव का पालन मैं ज़रूर करूँगा। मालिक की मदद करना पुण्य कार्य भी तो है?" ऊँट ने कहा।

"मित्र! तब तो सुनो! तुम अपनी इस देह को शत प्रतिशत ब्याज पर हमारे मालिक को सौंप दो। तुम्हारे मर जाने पर तुम्हें दुगुनी शक्तिवाला पुनर्जन्म प्राप्त होगा।" सियार ने समझाया।

"मृत्यु देवता इस शर्त को स्वीकार कर ले, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।" ऊँट ने कहा। इसके बाद सियार ने सिंह के पास जाकर कहा–"महाराज! हमने बड़ी कोशिश की, पर कोई शिकार नहीं मिला।" ये बातें सुन सिंह निराश हो गया, तब सियार ने यों कहा: "महाराज! आप को मैं एक खुश खबरी सुनाना चाहता हूँ। हमारे दोस्त ऊँट अपने शरीर को आप को सौंपने के लिए तैयार हैं। मगर शर्त यह है कि आप को मृत्यु देवता को साक्षी बनाकर यह शपथ करनी होगी कि आप उसके शरीर को सौ प्रतिशत ब्याज के साथ वापस करेंगे।"

सिंह ने इस शर्त को मान लिया और ऊँट की उदारता पर प्रसन्न हो उसे धन्यवाद भी दिया। तब सिंह ने मृत्यु देवता को साक्षी बनने का अनुरोध किया, ऊँट को मार डाला। सियार तथा भेड़िये ने ऊँट के शरीर को फाड़कर मांस तैयार रखा। मगर सियार चाहता था कि ऊँट का सारा कलेवर उसी को प्राप्त हो! इसके वास्ते उसने एक उपाय किया। सिंह के सारे शरीर में खून के धब्बों को देख सियार ने कहा–"महाराज! आप नदी में जाकर नहाकर लौट आइए। तब तक मैं ऊँट के कलेवर का पहरा देता रहूँगा।"

विचित्र जुड़वाँ

[१२]

[पहरेदार राक्षस सुकेशिनी की बातों में आकर तड़ाग के किनारे होनेवाले खेल व गीतों को देख-सुनकर मनोरंजन के निमित्त प्रति दिन वहाँ पर जाने लगा। उस वक़्त सुभाषिणी ने शिला प्रतिमाओं के रूप में परिवर्तित जुड़वें भाइयों पर मंत्र-जल छिड़का कर उन्हें पूर्व रूप दिलाये। सब लोग तड़ाग के पास पहुँचे। बाद......]

राक्षस को धोखा देकर जुड़वें भाई उसके जाल से बच गये, पर वे अशांत रहने लगे। क्योंकि इसके पूर्व राक्षस की आँखों में पड़ने से बचने के लिए अदृश्य बन जाने का जो भस्म उनके पास था, उसे वे खो बैठे थे। यदि राजकुमारियों के साथ वे भी हँसों के रूप में तड़ाग में रहना चाहें, वह भी संभव न था। क्योंकि हंसों की संख्या से राक्षस भली-भाँति परिचित था। इसलिए उनकी समझ में न आया कि क्या किया जाय! यही परेशानी की बात थी।

इस प्रकार विपत्ति में फँसकर जुड़वें भाई एक-एक पल को एक युग के समान बिताने लगे।

एक दिन सुभाषिणी ने जुड़वें भाइयों को समझाया—"तुम लोगों का यहाँ रहना खतरे से खाली नहीं है। हमने राक्षस
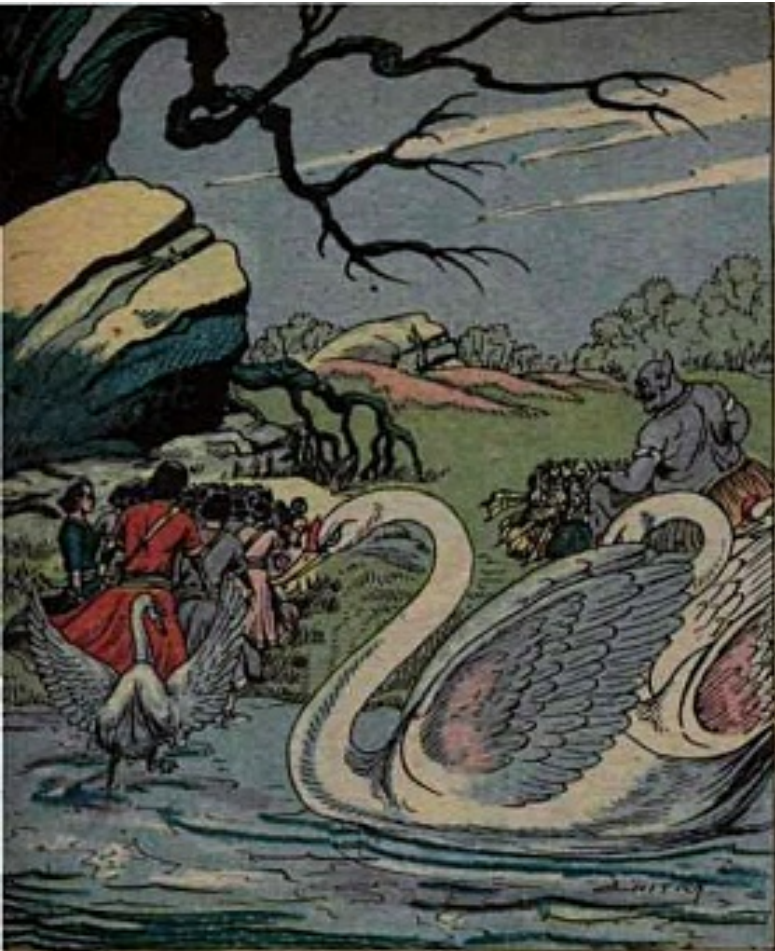
को जो दगा दिया, इससे वह हम पर सख्त नाराज़ होगा। इस बार यदि उसके हाथों में पड़ गये तो वह जान से छोड़ न देगा। इसलिए जब वह मनोरंजन करने के लिए यहाँ पर आएगा, तब मौक़ा पाकर यहाँ से चले जाओ। साथ ही हमारी रक्षा करने की बात भी भूल जाओ।"

इसके उत्तर में उदयन ने यों कहा—"ऐसा कभी नहीं हो सकता। हमारे प्राणों के रहते हम तुम लोगों की रक्षा करने का प्रयत्न त्याग नहीं सकते।"

"तब तो एक ही उपाय है! कल जब वह राक्षस यहाँ पर आएगा, तब मैं यह प्रबंध करूँगी कि हमारे साथ तड़ाग में रहनेवाले अन्य राजकुमार भी मनोरंजन के कार्यक्रम में भाग ले। उन राजकुमारों में तुम लोग भी मिल जाओ और मौक़ा पाकर राक्षस का सिर काट दो।" सुभाषिणी ने कहा।

जुड़वें राजकुमारों को यह उपाय अच्छा लगा। दूसरे दिन जब राक्षस राजकुमारियों का खेल देखने आया, तब सुभाषिणी ने उससे कहा—"इतनी सारी नारियों के बीच तुम अकेले पुरुष का रहना वैसे अच्छा नहीं लगता। तड़ाग में कई राजकुमार हैं। उनको भी हम अपने साथ लेंगे। खेल में भी मज़ा आएगा और साथ ही देखनेवालों को भी बुरा न लगेगा।"

"यह भी क्या मुझ से पूछने की बात है? ऐसा ही करो।" राक्षस ने झट कह दिया।

दूसरे ही क्षण तालाब में रहनेवाले सारे हंस किनारे पर आये और मानव रूप को प्राप्त हुए। उनमें जुड़वें भाई भी थे। मगर खेल-गीतों में निमग्न राक्षस की दृष्टि उन पर नहीं पड़ी।

राजकुमारियाँ तन्मय हो नाच रही थीं। राक्षस मनोरंजन में खोया हुआ था। मौक़ा देख उदयन ने चट से तलवार निकाली

और एक ही वार में उसका सर काट डाला। राक्षस का सिर धड़ से कटकर नीचे गिर गया और सिर लुढ़कते लुढ़कते तड़ाग में जा गिरा। सिर से बहने वाले खून से तड़ाग का सारा जल लाल हो उठा।

उसी वक़्त एक और विचित्र घटना घटी। राक्षस की मृत्यु के साथ उसके द्वारा पहरा देनेवाला महल भी ग़ायब हो गया। मगर जुड़वें भाइयों की भाँति वहाँ आकर राक्षस के हाथों में बन्दी बने राजकुमारों की शिला प्रतिमाएँ ज्यों की त्यों रह गई थीं।

इस पर सुहासिनी ने कहा—"देखते क्या हो? मंत्र-जल छिड़क कर उन शिलाप्रतिमाओं को पूर्व रूप दिलाओ।"

इसके बाद मंत्रजल छिड़कने पर वे प्रतिमाएँ राजकुमार बन गयीं। उनमें अनेक वर्गों के लोग थे।

सब ने जुड़वें भाई तथा राजकुमारियों की दिल खोलकर तारीफ़ की। अचानक उन्हें इस प्रकार अपने पूर्व रूप को प्राप्त होने पर अपार हर्ष हुआ। मगर इस प्रसन्नता के बीच चिंता यह थी कि वे सब अपने अपने घर कैसे पहुँचे! और दूसरे राक्षस की नज़र बचाकर उस प्रदेश में कैसे संचार करे!

इस संबंध में सब ने इकट्ठे हो विचार-विमर्श किया। मगर कोई भी उचित उपाय सूझ न पाया। आख़िर उदयन ने

कहा–"आप सब का यहाँ पर रहना खतरे से खाली नहीं। इन राजकुमारियों की रक्षा करने की जिम्मेदारी हम अपने ऊपर लेते हैं। इसलिए आप लोग निश्चिंत अपने अपने घर जा सकते हैं।"

उदयन के सुझाव को किसी ने भी स्वीकार नहीं किया। उनमें से एक वृद्ध ने कहा–"बेटा! हम लोगों का भी घर लौट जाना मामूली बात नहीं, दाढ़ीवाले को चकमा देकर निकलना ना मुमकिन है। इसलिए हमारे सामने एक ही उपाय है। वह कि हम को फिर से तुम शिला-प्रतिमाएँ बना दो। हम यहीं पर सदा के लिए निर्जीव पड़े रहेंगे।"

आखिर जुड़वें भाइयों को वृद्ध की सलाह माननी पड़ी। उनकी इच्छा के अनुरूप उसने सब को पुनः शिला प्रतिमाएँ बना दीं।

अब वे लोग सोच ही रहे थे कि आगे का कार्यक्रम क्या है! तभी वहाँ पर दूसरा राक्षस आ पहुँचा। इस बार वह खाली हाथ न लौटा, बल्कि एक राजकुमारी को अपने साथ ले आया। उसके निकट आने की आहट हुई। उस जल्दबाजी में आगा-पीछा सोचे बिना जुड़वें भाई तड़ाग में कूदकर हंसों के रूप में बदल गये।

दूसरे ही क्षण राक्षस तड़ाग के निकट पहुँचा। अपने साथ लाई हुई राजकुमारी को भी उस तड़ाग में फेंक दिया। वह भी हंस के रूप में बदल गई।

राक्षस ने हंसों की गिनती की। वह आज तक यही सोच रहा था कि तड़ाग में कुल सैंतालीस लोग हैं और अपने व्रत की पूर्ति के लिए केवल तीन लोगों की कमी है। उस दिन वह जिस राजकुमारी को लाया था, उसके साथ उनकी संख्या अड़तालीस होनी थी। मगर गिनती करके देखने पर कुल इक्कावन लोग थे। वह खुशी से नाच उठा, लेकिन दूसरे ही क्षण उसे कोई संदेह हुआ। उसने सभी हंसों को किनारे पर आ जाने की आज्ञा दी। सब के बाहर

आने पर राक्षस ने कड़ककर पूछा–"तुम लोगों में से नये आये हुए तीन व्यक्ति कौन हैं? तुम तीनों तुरंत आगे आ जाओ। वरना बड़ा बुरा होगा।"

जुड़वें भाइयों ने आगे बढ़कर कहा– "हम तीनों! पर यह बताओ कि इन अबोध राजकुमारियों को तुमने इस प्रकार बन्दी बनाकर क्यों रखा? अब भी कुछ बिगड़ा नहीं है! तुम इन्हें छोड़ दो! वरना तुम्हारे भाई की जो हालत हुई है, वही तुम्हारी भी होगी!"

"क्या कहा? मेरे भाई की कैसी हालत हुई है? वह कहाँ पर है?" राक्षस ने गरजकर पूछा।

"और क्या होगा? वह कभी का मिट्टी में मिल गया है! उसके साथ तुम्हारा जादू का महल भी..." जुड़वें भाई कह ही रहे थे कि राक्षस उस महल की ओर दौड़ पड़ा जिसका पहरा उसका छोटा भाई दे रहा था। वहाँ पर शिला प्रतिमाएँ मात्र थीं। महल गायब था! उसके आश्चर्य की कोई सीमा न थी।

राक्षस की आँखों में क्रोध भड़क उठा। वह फिर तड़ाग के पास लौट आया। इस बीच जुड़वें भाई उद्यान में गये। आम तोड़कर खाये और बंदरों के रूप में बदल गये। राक्षस से बचकर वे बंदर

एक पेड़े से दूसरे पर छलांग मारते उसको सताने लगे।

आखिर थककर उसने धमकी दी– "अच्छी बात है! मैं देखूंगा, तुम कितने दिन इस प्रकार मुझ से बचकर जी सकते हो?" इन शब्दों के साथ गीध के रूप में बदलकर राक्षस आसमान में उड़कर चला गया।

इसके थोड़ी देर बाद उस जगह दाढ़ीवाला आया जहाँ पर जुड़वें भाई बंदरों के रूप में भटक रहे थे।

बंदरों को देख दाढ़ीवाले ने दाँत किटकिटाते कहा–"तुम लोगों को अच्छा दण्ड मिल गया है। वरना तुम्हें इतना

घमण्ड? यह गनीमत समझो कि तुम लोगों को राक्षस ने प्राणों के साथ छोड़ दिया है।"

उस समय अकस्मात एक बंदर दाढ़ीवाले के सिर पर कूद पड़ा। वह चौंककर ऊपर देखने को हुआ, तभी दूसरा बंदर आया, उसकी दाढ़ी पकड़कर खींचने लगा। तीसरा बंदर उसके पैरों में लिपटकर लटकने लगा। दाढ़ीवाला हाहाकार मचाने लगा। जिस बंदर ने दाढ़ी पकड़ी थी, उसने दाढ़ीवाले को पेड़ के ऊपर खींच ले जाकर एक डाल से कसकर उसकी दाढ़ी बाँध दी और उसे डाल से लटका दिया। इसके बाद पेड़ के नीचे उगे कुकुरमुत्ते खाकर जुड़वें भाई असली रूप को प्राप्त हुए।

जुड़वें भाइयों को अपने पूर्व रूपों में देख दाढ़ीवाला गिड़गिड़ाने लगा–"लगता है कि तुम लोग यहाँ के पेड़-पौधों के गुणों से भलीभाँति परिचित हों। मूर्खतावश में तुम लोगों के पास आया, मुझे क्षमा करके छोड़ दो। मैं कभी तुम्हारी बुराई नहीं सोचूंगा।"

"इस बार हम तुम को छोड़नेवाले नहीं हैं। इस पल से तुम राक्षस के सेवक नहीं हो, बल्कि हमारे सेवक हो! इसलिए हम जो भी आदेश देंगे, तुम्हें उनका पालन करना होगा। तुम अपने जादू का दण्ड हमें दे दो। साथ ही राक्षस के सारे रहस्य बता दो। यदि तुम इन शर्तों को मान जाओगे तो हम तुम्हें छोड़ देंगे। वरना तुम्हें इसी प्रकार हमेशा के लिए लटकते रहना होगा।" उदयन ने अपना दृढ़ निर्णय सुनाया।

इस पर दाढ़ीवाले ने कहा–"तुम लोगों ने बड़ी बड़ी शर्तें रखीं। तुम्हारे सेवक बने रहने में मुझे कोई एतराज नहीं। जादू का दण्ड भी तुम्हें सौंप दूंगा, लेकिन राक्षस के रहस्य प्रकट करने पर मुझ पर दबाव न डाले। मैंने इसके पहले ही बताया था कि उन रहस्यों के प्रकट करने

पर सिर फूटकर मैं उसी क्षण मर जाऊँगा। अब सवाल यह है कि इस वक्त में उस रहस्य का उद्घाटन कर या तो मर जाऊँ अथवा तुम्हारा सेवक बनकर यथा योग्य तुम लोगों की सेवा करता रहूँ? फिर भी तुम लोग यदि लगन के साथ प्रयत्न करोगे तो राक्षस का रहस्य बड़ी आसानी से जान सकते हो!" इन शब्दों के साथ उसने अपने कंठ की माला उतारकर उदयन के हाथ दे दी।

उदयन ने माला लेकर अपने कंठ में पहन ली। दाढ़ीवाले ने मानव रूप को प्राप्त किया तो उदयन ने दाढ़ीवाले की आकृति पाई। इसके साथ उदयन ने अंजन, भस्म तथा तौलिये भी प्राप्त किये।

इसके बाद उदयन तड़ाग के पास पहुँचा। हंसों के रूप में रहनेवाली राजकुमारियों को बाहर आने को कहा। सब राजकुमारियाँ बाहर आकर क़तारों में बैठ गईं। उदयन ने तौलिये की महिमा के द्वारा सब को बढ़िया दावत दी। तब शिला प्रतिमाओं के रूप में स्थित युवकों को पूर्व रूप दिलाकर उन्हें भी दावत दी।

दावत के समाप्त होने पर उदयन ने दाढ़ीवाले से कहा—"तुम इन सब को ले जाकर उनके घर छोड़ आओ।"

इस पर दाढ़ीवाले ने कहा—"यह काम बड़े ही जोखिम का है। राक्षस की आँखों में पड़ गये तो प्राणों से हाथ धोना

पड़ेगा। इसलिए और थोड़े दिन तक शिला प्रतिमाओं तथा हंसों को यहीं पर रहने दीजिए। मौक़ा देखकर उन्हें उनके घर पहुँचा दूंगा।"

जुड़वें भाइयों ने दाढ़ीवाले की बात मान ली। तब उन्हें पुनः शिला प्रतिमाओं तथा हंसों के रूप में बदलकर उन्हें अपनी अपनी जगह रहने दिया।

इस बीच राक्षस भी आ पहुँचा। उसके आने का समाचार जानकर दाढ़ीवाले की आकृति में स्थित उदयन ने भस्म निकालकर अपने भाइयों तथा दाढ़ीवाले के ऊपर भी छिड़क दिया। राक्षस जब वहाँ पहुँचा, तब दाढ़ीवाले की आकृति में स्थित उदयन मात्र खड़ा रहा। राक्षस ने सोचा कि वह व्यक्ति अपना वही पुराना सेवक दाढ़ीवाला ही है, तब पूछा–"सुनो, वे तीनों बंदर कहाँ गये?"

"जायेंगे ही कहाँ? मैं ने तीनों को गला घोंटकर मार डाला।" उदयन ने जवाब दिया।

"दिखाओ तो, वे कहाँ पर हैं?" राक्षस ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"चलो, दिखा देता हूँ।" इन शब्दों के साथ उदयन राक्षस को एक उजड़े कुएँ के पास ले गया और उसको भीतर झाँककर देखने की सलाह दी।

राक्षस जल्दबाजी में आकर कुएँ में झाँककर देखने को हुआ। उदयन ने इसके पूर्व ही वहाँ पर एक तलवार छिपा रखी थी। राक्षस के झुकते ही उदयन ने उस पर तलवार चला दी। राक्षस का सिर कट कर कुएँ में तो गिर गया। पर विस्मय की बात थी कि राक्षस के धड़ पर एक और सिर उग आया।

राक्षस ने झट मुड़कर दाढ़ीवाले के वेष में स्थित उदयन को अपनी मुट्ठी में लेकर कहा–"अरे, तुम मुझ को दगा देना चाहते हो? मेरा नमक खाकर मेरा ही वध करना चाहते हो?" यों कहते उसने दाढ़ीवाले के वेष में स्थित उदयन को कुएँ में गिरा दिया। (और है)

नरक का निवास

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—" राजन, हमने सुना है कि कई लोग शरीर के साथ स्वर्ग गये हैं, मगर तुम ने शरीर के साथ नरक में जानेवालों की कथा शायद सुनी न होगी। मैं उन लोगों की विचित्र कथा सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: हेमंत देश में एक विधवा थी। उसके कुसुमवती नामक एक पुत्री थी। जब वह छोटी-सी बच्ची थी, तभी उसका पिता मर गया। इस पर वह विधवा भीख मांगते अपने जीविन बिताने लगी। उसने किसी का भार बने बिना गाँवों में घूमते अपनी लड़की को पाल-पोसकर बड़ा किया।

बेताल कथाएँ

कुसुमवती जब युक्त वयस्का हुई, तब उसकी माँ की तबीयत खराब हो गई और उसमें चलने-फिरने की भी ताक़त न रही। इस पर कुसुमवती ने अपनी माँ से कहा–"माँ, जब से मैं पैदा हुई, तब से मेरे वास्ते तुम ने असंख्य यातनाएँ झेलीं। तुम्हारी कृपा से मुझे अच्छा स्वास्थ्य और ताक़त भी प्राप्त हैं। अब हमें गाँवों में भटकना नहीं है। मुझे किसी गाँव में एक प्रतिष्ठित परिवार में काम पर लगा दो, तो मैं ज़िंदगी भर तुम्हारा पालन-पोषण करूँगी।"

कुसुमवती की माँ ने अपनी बेटी के सुझाव को मान लिया। वे दोनों जल्द ही एक संपन्न गाँव में पहुँचे। अंधेरे के फैलते देख कुसुमवती एक संपन्न घर के सामने रुक गई और उस घर की गृहिणी से पूछा–"माई, आज रात को मुझे और मेरी माँ को इस बरामदे में सोने की अनुमति दोगी?"

उस घर की मालिकिन ने न केवल उन्हें सोने की अनुमति दी, बल्कि भर पेट खाना भी खिलाया।

दूसरे दिन सवेरे कुसुमवती ने घर की मालिकिन से कहा–"माई, मुझे अपने घर में नौकरानी रखोगी तो तुम जो भी काम बताओ, मैं दिल लगाकर करूँगी। मुझे वेतन की भी जरूरत नहीं। मेरे तथा मेरी माँ को भर पेट खाना खिला दे तो पर्याप्त है।"

"बेटी! इस घर में काम की कोई कमी नहीं है! तुम जैसी युवती हमारे घर के काम-काजों में मदद दे तो हमें चाहिए ही क्या? तुम दोनों यहीं पर रह जाओ!" घर की मालिकिन ने समझाया।

उस मकान के पीछे एक कोठरी थी। कुसुमवती अपनी माँ के साथ उसी कोठी में रहने लगी। वह सवेरे उठकर काम पर चली जाती, सिर्फ़ अपनी माँ को खाना खिलाने के लिए उस कोठरी म

आ जाती थी। जब भी अपनी माँ के पास आती, उसका हाल-चाल पूछ लेती। कुसुमवती के काम से घर-भर के लोग खुश थे। वे अपने घर और परिवार की सारी बातें कुसुमवती से बिना छुपाये सुनाया करते थे।

एक दिन शाम को कुसुमवती कलश में पानी भरकर ले आ रही थी, तब घर के पिछवाड़े में उसे एक बलिष्ठ युवक दिखाई दिया। उसने पूछा–"तुम तो इस घर की नहीं, कहाँ से आई हो?"

"जी हाँ! लेकिन मैंने भी तो आज तक आप को नहीं देखा?" कुसुमवती बोली।

"मैं इधर थोड़े समय से यहाँ नहीं हूँ। तुम्हें मेरी एक मदद करनी है। एक साल तक मेरा पता किसी को बताये बिना गुप्त रखोगी तो मैं नरक से मुक्त हो सकता हूँ। मैं इस परिवार का इकलौता पुत्र हूँ। मूर्खतावश मैंने पिशाचों का तिरस्कार किया और नरक में फँस गया हूँ। अब एक वर्ष तक मुझे नरक की यातना भोगनी पड़ेगी।" युवक ने अपना वृत्तांत सुनाया।

"मैं आप का रहस्य गुप्त रखूंगी। बताइए, मैं आप की किस प्रकार सहायता कर सकती हूँ?" कुसुमवती ने पूछा।

"इस घर की मालिकिन मेरी माँ है। जब मैं गायब हो गया हूँ, तब से मेरी माँ ने मेरे कमरे पर ताला लगा रखा है। तुम वह कमरा अपने लिए

माँग लो। यदि वह कमरा तुम्हें देने से इनकार करेंगी तो धमकी दो कि तुम इस घर को छोड़कर चली जाओगी।" यों कहते वह युवक गायब हो गया।

कुसुमवती ने मालिकिन से पूछा– "मालिकिन, आप का एक कमरा खाली पड़ा हुआ है, यदि वह मेरे रहने के लिए दिया जाय तो मैं और आराम से सो जाऊँगी और अच्छा काम कर सकूँगी।"

ये शब्द सुनने पर घर की मालिकिन को गुस्सा आया। वह बोली–"यह तुम्हारी कैसी हिम्मत है? वह कमरा मेरे मृत पुत्र का है। उसकी लाश को उस कमरे से बाहर लाने के बाद हम ने उसमें किसी को क़दम तक रखने नहीं दिया। प्रेत कर्म तक पूरा करने के पहले मेरे पुत्र की लाश गायब हो गई। लोगों ने कहा कि उसकी लाश को पिशाच उठा ले गये हैं। तुम वही कमरा मांगती हो?"

"तब तो मुझे इस घर से भिजवा दीजिए।" कुसुमवती ने हठ किया।

लाचार होकर घर की मालिकिन बोली– "यह बात सही है कि उस कमरे को कभी न कभी खोलना ही पड़ेगा। उस कमरे के पीछे तुमको यहाँ से भेजना भी मैं पसंद नहीं करती।" यों कहते वह गृहिणी कमरे की चाभी ढूंढ़ लाई और कुसुमवती के हाथ थमा दी। कुसुमवती ने मालिकिन के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। कमरे के किवाड़ और खिड़कियाँ खोल दीं। तब सारा कमरा पोंछ-धोकर साफ़ किया।

उस कमरे में पहले ही पलंग और बिस्तर थे। उस रात को बिस्तर बिछाकर कुसुमवती सो गई। आधी रात के वक़्त वह युवक किवाड़ खोलकर भीतर आया। दोनों में बातचीत हुई। उसने सविस्तार बताया कि वह शरीर के साथ कैसे नरक में चला गया है। वास्तव में वह मरा न था। पिशाचों ने उस युवक पर अपना प्रभाव जमाया, उसे मृत व्यक्ति के समान बेहोश करके उसके शरीर को नरक में

ले गये। वहाँ पर वह पिशाचों के लिए तरह-तरह की सेवाएँ कर रहा है। उसे मुक्त होने में अभी एक वर्ष शेष है। वह घंटे भर के लिए नरक में से कहीं आ-जा सकता है, मगर अपने परिवार के लोगों की आँखों में नहीं पड़ सकता।

वह युवक कुसुमवती के साथ उस रात को एक घंटा बिताकर फिर चला गया।

उस दिन से वह लगातार हर रोज़ रात को कुसुमवती के पास आ जाता, उसके साथ थोड़ी देर बिता देता, पुनः पिशाचों के साथ नरकलोक में चला जाता। कुछ दिन बाद कुसुमवती गर्भवती हो गई। यह बात मालिकिन ने ताड़ ली। उसने हर तरह से यह जानने की कोशिश की कि कुसुमवती के गर्भ से पैदा होनेवाले शिशु का पिता कौन है? लेकिन कुसुमवती के रहस्य का उसे बिलकुल पता न चला।

एक दिन कुसुमवती काम पर न आई। घर की मालिकिन ने कुसुमवती के कमरे के पास जाकर सावधानी से सुना। भीतर कुसुमवती के साथ कोई बातचीत कर रहा था। घर की मालिकिन ने किवाड़ के दरार में से झांककर देखा। कुसुमवती एक शिशु को दूध पिला रही है। उसके सामने बैठकर बात करनेवाला युवक और कोई न था, बल्कि मालिकिन का पुत्र ही था।

उसी वक़्त उसे याद आया कि उसका पुत्र कभी का मर गया है, इसलिए वह तेज़ी के साथ वहाँ से चली गई।

इसके कुछ दिन बाद कुसुमवती ने विस्तर से उठकर किवाड़ खोले। तब घर की एक और नौकरानी ने आकर बताया—"मालिकिन ने एक बहुत बड़ा बक्सा थोड़े दिन के लिए तुम्हारे कमरे में रखने को बताया है। उसमें किसी के सोने व चान्दी के गहने रखे हुए हैं।"

कुसुमवती ने बक्सा रखने को मान लिया। शाम के वक़्त बक्सा कुसुमवती के कमरे में पहुँचाया गया। उसमें मालिकिन बैठकर ताले के छेदों में से देख रही थी।

आधी रात के वक़्त मालिकिन का पुत्र कमरे में आकर बैठ गया और कुसुमवती के साथ बातचीत करने लगा। मालिकिन से अब रहा न गया। वह उसका आलिंगन करके बोली—"बेटा! तुम्हीं हो! इतने दिन तक कहां रहे?"

पुत्र तो अपनी मां को देख खुश न हुआ, बल्कि खीझकर बोला—"मां, तुम ने यह क्या किया? एक महीना और तुम सब्र कर लेती तो मैं पहले जैसे सदा के लिए यहीं पर आ जाता। अब मुझे सात साल और नरक में बिताना होगा!"

"बेटा! मैं अपने बदन में प्राण के रहते तुम को फिर जाने दूंगी?" मां ने कहा।

"मां! तुम पिशाचों को रोक नहीं सकती।" पुत्र ने समझाया।

मां कमरे से बाहर जाकर पिशाचों का इंतज़ार करने लगी। बड़ी देर तक वे न आये। उसे लगा कि कमरे के भीतर बात करनेवाले उसके पुत्र का कंठ मौन है! उसने कमरे में झांककर देखा, कमरे के अंदर उसका पुत्र न था।

पिशाचों के द्वारा उठा ले जाने के पहले कुसुमवती ने अपने पति से कहा था—"मेरी मां तथा बच्चे की देखभाल करने के लिए कोई तैयार हो जाय तो मैं आप के बदले नरक जाकर सात साल तक उनकी सेवा करूँगी।"

"मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि मैं तुम्हारी माँ और बच्चे की देखभाल करूँगा।" युवक ने बताया, अब पिशाचों को भी इसके लिए राजी. किया। कुसुमवती अपने बच्चे को प्यार से चूमकर पिशाचों के साथ नरकलोक में चली गई। घर की मालिकिन इस बात के लिए बहुत प्रसन्न हुई कि उसका पुत्र सदा के लिए उसे प्राप्त हो गया है।

कुसुमवती को मालूम हुआ कि पल भर भी नरक में बिताना कैसा कठिन है! उसने इस तृप्ति के साथ नरक में सात वर्ष पर्यंत चाकरी करते बिताया कि वह अपने पति को नरक की यातना से बचा पाई।

आखिर उसे नरक से मुक्ति मिली। पिशाचों ने उसे उसके घर पर छोड़ दिया। घर पर कोलाहल छाया हुआ था। घर के बाहर और भीतर लोग प्रसन्न नज़र आ रहे थे। कुसुमवती ने सुना कि उस घर के पुत्र का विवाह हो रहा है। वह पहले इस बात पर विश्वास न कर पाई कि उसका पति उसके वास्ते अवधि के पूरा होने तक इंतज़ार किये बिना ठीक उसके लौटते समय ही एक दूसरी कन्या के साथ विवाह कर रहा है। उसने यह भी सुना कि उसकी माँ थोड़े दिन पूर्व मर गई है।

गरीबों में उपहार बांटे जा रहे थे। कुसुमवती का पति पुरुषों में, उसकी सास औरतों में तथा उसके सात वर्ष का पुत्र बच्चों में इनाम बांट रहे हैं। तीनों के चेहरों पर प्रसन्नता झलक रही थी। तीनों ने कुसुमवती को देखा, मगर कोई उसको पहचान न पाये। अपनी सास के द्वारा दी जानेवाली साड़ी व चोली लिये बिना कुसुमवती वहाँ से चली गई।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, कुसुमवती अपने पति के बदले नरक में क्यों चली गई? क्या अत्यधिक पति-प्रेम की वजह से? या पत्नी के रूप में उसे अपना कर्तव्य मान कर? इतना

बड़ा त्याग करनेवाली कुसुमवती ने अपना परिचय देकर अपने पति को दूसरी कन्या के साथ विवाह करते देख क्यों नहीं रोका? इन संदेहों का समाधान जानकर भी न बताओगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा!"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया—"कुसुमवती यातनाएँ झेलने से डरनेवाली नहीं है। मगर वह दूसरों को कष्ट झेलते देख सहन नहीं कर पाती। इसीलिए वह आप कष्ट उठाकर अपनी माँ को सुखी बनाने के लिए उद्यत हो गई। इस बात का कोई सबूत नहीं कि उसने अपने पति को दिल से प्यार किया है। उसको नरक की यातनाएँ झेलते रहम खाकर वह उसकी पत्नी बन गई। अपने पति के बदले कुसुमवती का नरक में जाने का कारण यह भी हो सकता है कि अपने पति को नरक की यातनाओं से मुक्त करने के साथ माता-पुत्र को अलग से रहने से बचाना भी था। इस बात का भी कोई प्रमाण नहीं है कि कुसुमवती को उसका पति प्यार करता है। उसने नरक से मुक्त होने के लिए कुसुमवती को अपना साधन बना लिया है। जब कुसुमवती अपने पति की जगह नरक जाने के लिए तैयार हो गई, तब उसने कोई एतराज नहीं किया। जब लोगों में यह विदित हुआ कि सात साल की अवधि पूरी हो गई है, तब उसने एक और कन्या के साथ विवाह किया। कुसुमवती को तो अपनी माँ तथा पुत्र के वास्ते जीवित रहना था। अब तो उसकी माँ मर चुकी है, पुत्र तो सुखपूर्वक है। जिसने नरक में सात वर्ष पर्यंत चाकरी की, वह पृथ्वी पर दूसरों की सेवा करके बड़ी सरलतापूर्वक अपना पेट भर सकती है। यही कार्य करने के लिए कुसुमवती ने निश्चय कर लिया होगा।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

समर्थ सेनापति

रत्नगिरि राज्य का राजा रुद्रदेव शासन कार्यों में अत्यंत पटु था। वह अपनी प्रजा को अपनी संतान की तरह मानता और राज कर्मचारियों के विचारों पर भी समुचित ध्यान देता था। अपने मंत्रियों की सलाहों का कभी तिरस्कार न करता था।

रुद्रदेव शिकार खेलने का बड़ा शौक रखता था। वह सदा अपने साथ एक ही व्यक्ति को लेकर जंगल में शिकार खेलने जाता था। वह अपने साथ अपने दरबारियों के पुत्रों में से ही किसी को शिकार खेलने ले जाता था।

एक बार राजा रुद्रदेव के साथ दरबारी वैद्य का पुत्र रत्नाकर शिकार खेलने गया। उसकी उम्र बाईस साल की थी, पर वह खूब स्वस्थ तथा हृष्ट-पुष्ट था।

प्रातःकाल के समय वे दोनों जंगल में पहुँचे। अपराह्न होने को था, फिर भी एक भी शिकार राजा के हाथ न लगा। दोनों थककर एक पेड़ के नीचे विश्राम करने लगे।

उस वक़्त अचानक उन्हें थोड़ी दूर पर एक गेंडा दिखाई पड़ा। वह उनकी ओर बड़ी तेज़ी के साथ बढ़ा चला आ रहा था। राजा की समझ में न आया कि इस खतरे से जान कैसे बचावे? वह घबरा गया। पर रत्नकुमार ज़रा भी विचलित न हुआ। गैण्डे का चमड़ा कवच जैसा होता है। साधारणतया बाण या भाला तक उसको भेद नहीं सकता। यह बात जानकर रत्नकुमार ने तलवार से केले का एक पेड़ काट डाला और उसे अपने हाथ में लिए खड़ा रहा। जब गैण्डा उसके बिलकुल निकट आया तब उसने पलक मारने की देरी भर में केले के पेड़ को गैण्डे

श्री ए. सी. सरकार, जादूगर

को नाक पर के सींग में धंसने लायक़ फेंक दिया।

गैण्डा झूमकर आगे की ओर लुढ़क पड़ा। तभी रत्नकुमार ने अपनी तलवार उनकी आंख में इस तरह घुसेड़ दी जिस से वह गैण्डे की खोपड़ी में जा धँसी। फिर क्या था, गैण्डा पल भर के लिए काँप उठा और उसने दम तोड़ दिया।
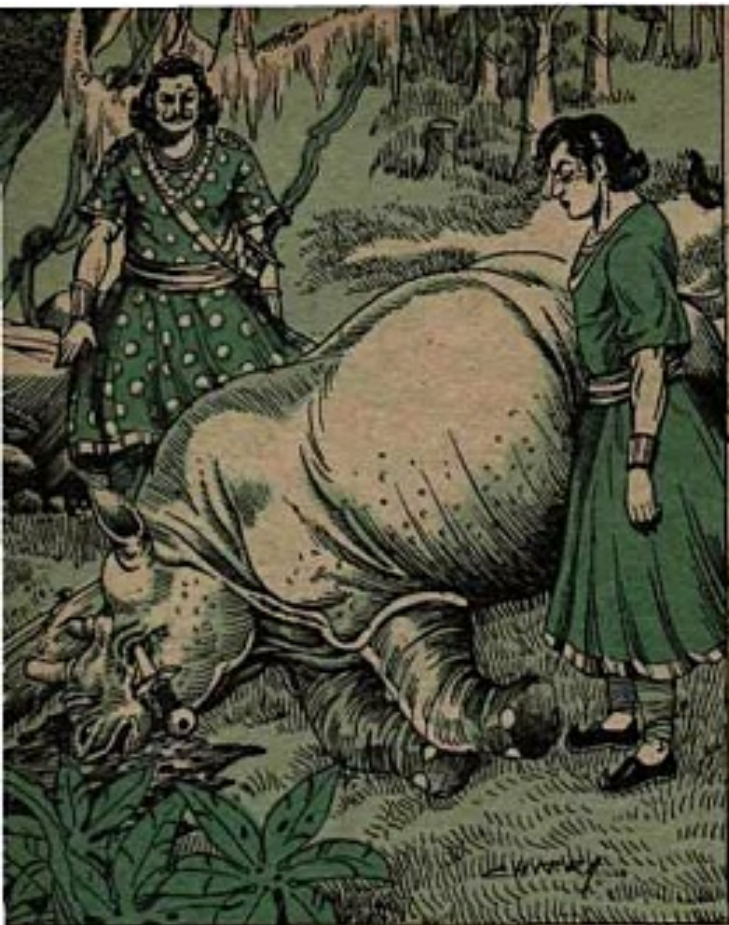
इस अप्रत्याशित घटना की वजह से थोड़ी देर के लिए राजा अवाक् रह गया। इसके बाद राजा ने रत्नकुमार को हृदय से धन्यवाद दिया और उसकी तारीफ़ की। वास्तव में रत्नकुमार की समय की सूझ तथा हिम्मत ने राजा को मंत्र मुग्ध बनाया। उस दिन रत्नकुमार ने राजा के प्राण बचाये, यह बात राजा के हृदय में स्थाई रह गई।

इसके पूर्व राजा रुद्रदेव अपने साथ शिकार खेलने के लिए प्रायः सभी ऊँचे अधिकारियों के पुत्रों को ले गया था। परंतु रत्नकुमार ने जैसी हिम्मत दिखाई, वैसी किसी ने न दिखाई थी। जंगल में जब भी कोई खतरा उत्पन्न होता, राजा स्वयं उसका सामना करता आया था। इस बार रुद्रदेव मूर्तिवत् खड़ा रहा तो रत्नकुमार ने हिम्मत के साथ उस खतरे का सामना किया था।

इसके उपरांत भी कई दफ़े रत्नकुमार ने राजा के साथ शिकार खेलने जाकर अपनी शक्ति एवं सामर्थ्यों का परिचय दिया था। इसलिए राजा रुद्रदेव ने सोचा– "यह युवक भविष्य में मेरा सेनापति बन जाय तो बड़ा उत्तम होगा। लेकिन उस राज्य का यह रिवाज़ था कि किसी भी पद पर उस पद को संभालने वाले अधिकारी के पुत्र को ही नियुक्त किया जाय! फिर भी सेनापति की जगह राजा किसी दूसरे को नियुक्त करना चाहे तो भले ही सब आक्षेप न करे, किंतु उनका अनुमोदन प्राप्त न होगा। यह रुद्रदेव को भी पसंद न था।

कई साल बीत गये। वृद्ध सेनापति का देहांत हो गया। मंत्रियों ने राज्य के रिवाज के अनुसार राजा को यही सलाह दी कि मृत सेनापति के पुत्र उत्पलसिंह को ही उसके पिता की जगह पर नियुक्त करे।

यह बात राजा को बिलकुल पसंद न थी। इसलिए उसने अपने मंत्रियों से कहा–"आज हमारे शासन से संबंधित युवकों में बल एवं पराक्रम रखनेवाले अनेक हैं। वे सब सेनापति के पद को संभालनें की क्षमता रखते हैं। उन में से किसी युवक को क्यों न चुना जाय?"

"महाराज! सेनापति के पुत्र को ही सेनापति के पद पर नियुक्त करने का हमारा रिवाज है, उसका अतिक्रमण कैसे करे?" मंत्रियों ने संदेह प्रकट किया।

"यह बात सही है, मैं आप लोगों की इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य न करूँगा। मैं केवल आप लोगों के विचार जानना चाहता था!" राजा ने कहा।

इसके उपरांत दरबारी जादूगर रंगाराज ने राजा के निकट पहुँचकर पूछा–"महाराज! आप किसी गंभीर विचार में डूबे हुए हैं। क्या बात है?"

"बात और कुछ नहीं। नये सेनापति की नियुक्ति को लेकर ही।" राजा ने कहा।

"सेनापति का पुत्र तो है!" रंगराज ने झट कहा।

"नहीं, उस पद पर किसी दूसरे व्यक्ति को नियुक्त करना चाहता हूँ। मगर ऐसा करके सब को दुखी बनाना मेरा अभिमत कभी नहीं रहा है! इसलिए यह एक जटिल समस्या बन बैठी है!" रुद्रदेव ने बताया।

"यदि आप का मुझपर विश्वास है तो मैं इस समस्या को हल कर सकता हूँ।" रंगराज ने कहा।

"हाँ, हाँ! तुम्हारी बात में बिलकुल भूल ही गया। शायद तुम्हारी अतीत शक्तियों द्वारा मेरी ससम्या हल हो जाय!" राजा ने कहा।

"महाराज! अतीत शक्तियों की क्या आवश्यकता है? एक छोटी-सी युक्ति के द्वारा काम बन सकता है!" रंगराज ने कहा।

दूसरे दिन राजा को अपना उपाय बताने की बात बताकर रंगराज राजा से विदा लेकर चला गया।

दूसरे दिन राजा से मिलकर रंगराज ने कहा–"महाराज! मेरी युक्ति तैयार है। कृपया बताइये कि आप सेनापति के पद पर किसको नियुक्त करना चाहते हैं?"

"हमारे दरबारी वैद्य के पुत्र रत्नकुमार को। मेरा विश्वास है कि वही उस पद के लिए सब से योग्य व्यक्ति है!" राजा ने अपना विचार बताया।

"महाराज! तब तो युद्ध विद्याओं की प्रतियोगिता के प्रदर्शन का प्रबंध कर के आप चार व्यक्तियों को चुन लीजिए। उस प्रतियोगिता में रत्नकुमार तथा उत्पल सिंह को भी भाग लेने दीजिए! उस प्रतियोगिता में रत्नकुमार अवश्य विजयी होगा?" रंगराज ने पूछा।

"इसमें कोई संदेह की बात नहीं है!" राजा ने कहा।

"अच्छी बात है, महाराज! आप इस बात की घोषणा कराइए कि यह प्रतियोगिता शौक से चलाई जा रही है।

पर आप अपने मंत्रियों को यह सूचित कीजिए कि इस बार सेनापति की नियुक्ति नये ढंग से होगी और यह निर्णय बिलकुल ईश्वर की इच्छा पर होगा।" रंगराज ने सुझाव दिया।

प्रतियोगिता अच्छे ढंग से संपन्न हुई। उसमें रत्नकुमार प्रथम, उत्पल सिंह द्वितीय, न्याय विभाग के मंत्री का पुत्र अर्जुन तृतीय तथा एक कुलीन व्यक्ति का पुत्र संपत चौथा निकले।

दूसरे दिन दरबार में रुद्रदेव ने अपने मंत्री तथा सामंतों से यों कहा :

"मेरा विश्वास है कि मैं जो सुझाव देने जा रहा हूँ, उसे आप सब स्वीकार करेंगे। हाल ही में जो प्रतियोगिता संपन्न हुई, उसमें चार युवकों ने अपनी सामर्थ्य का परिचय दिया है। हमारे मृत सेनापति का पुत्र उत्पल सिंह उनमें एक है। मैं इस बात का निर्णय परीक्षा के द्वारा करना चाहता हूँ कि नये सेनापति का पद इनमें किसको प्राप्त हो? मैं जानता हूँ कि यह हमारे रिवाज़ के विरुद्ध है। मगर आप भली भाँति यह जान लें कि नये मार्गों का अवलंबन किये बिना हमारी उन्नति संभव नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि आप सब मेरी इस योजना को अवश्य ही स्वीकार करेंगे!"

अनेक दरबारियों ने रुद्रदेव के प्रति आदर रखने के कारण उनकी इस नई योजना को स्वीकार किया।

"तब तो मेरी योजना को अमल करेंगे।" इन शब्दों के साथ रुद्रदेव ने अपनी बगल में बैठी रानी सुलता की ओर मुखातिब होकर कहा—"महारानी को भी इस कार्य में अपना सहयोग देना होगा।"

महारानी ने अपनी स्वीकृति दी।

इसके बाद गत्ते के चार टुकड़े तथा चार लिफ़ाफ़े रानी के हाथ दिये गये। चारों गत्तों पर चार प्रतियोगियों के नाम लिखे हुए थे।

रानी पार्श्व के कमरे में अकेली गई। एक एक लिफ़ाफे में एक एक प्रतियोगी के

गत्ते को रखा, तब लिफ़ाफे को चिपकाकर राजा के हाथ में ला दिया ।

जब रानी ने पहला लिफ़ाफ़ा निकाला तब राजा ने "उत्पलसिंह" का नाम लिया । मंत्री ने उस लिफ़ाफ़े पर उत्पल सिंह का नाम लिखा । रानी ने जब दूसरा लिफ़ाफ़ा हाथ में लिया तब राजा ने संपत का नाम पुकारा । मंत्री ने दूसरे लिफ़ाफ़े पर संपत का नाम लिखा । इसी प्रकार तीसरी बार राजा ने रत्नकुमार का तथा चौथी बार अर्जुन का नाम लिया । मंत्री ने उन उन लिफ़ाफ़ों पर क्रमशः उनके नाम लिखे ।

इसके उपरांत राजा ने दरबारियों से कहा–"मैंने यह नहीं देखा कि लिफ़ाफ़ों के भीतर गत्तों पर किन किन के नाम हैं । जो नाम मेरे मुँह में आये सो मैंने कह दिये । पर संयोग से लिफ़ाफ़े पर का नाम तथा उसके भीतर के गत्ते पर का नाम एक ही निकले तो उस व्यक्ति को मैं सेनापति के पद पर नियुक्त करूँगा ।"

सब लिफ़ाफ़ों को खोलकर देखा गया तो रत्नकुमार का नाम ही लिफ़ाफ़े तथा गत्ते पर भी एक ही निकला । इस प्रकार रत्नकुमार सेनापति का पद पाकर अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य को एकदम साबित कर सका ।

राजा तथा रानी जब एकांत में वार्तालाप कर रहे थे, तब रानी ने राजा से कहा– "आप की युक्ति के सफल होने में मैंने ही सहायता दी है ।"

"किस नामवाले लिफ़ाफ़े को कैसे निकाला जाय, यह बात रंगराज ने तुम्हें समझा दी है । तुम ने जिस लिफ़ाफ़ा के निचले कोने को पकड़ा, उसमें उत्पल का नाम, ऊपरी भाग को पकड़नेवाले लिफ़ाफ़े में अर्जुन के नाम लिखे हुए हैं । इसलिए यह बात जानकर मैंने रत्नकुमार के नाम को सही बताकर बाक़ी नामों को बदल कर बताया ।"

इस प्रकार रंगराज राजा की योजना में सहायता देकर अच्छे पुरस्कार का अधिकारी बना ।

१६२. नमक का पहाड़

इस चित्र में हमें स्वच्छ नमक दिखाई दे रहा है। यह डोमिनिकन रिपब्लिक (पश्चिमी टापूओं) के कब्राल के समीप में स्थित पहाड़ है। यह नमक ऐसा स्वच्छ है कि इसकी गोलियां बनाकर बर्फ़ के टुकड़े बताते हुए यात्रियों के हाथ दे तो वे झट अपने पेय पदार्थों में डाल लेते थे। यह पहाड़ एक जमाने में समुद्र के गर्भ में था।
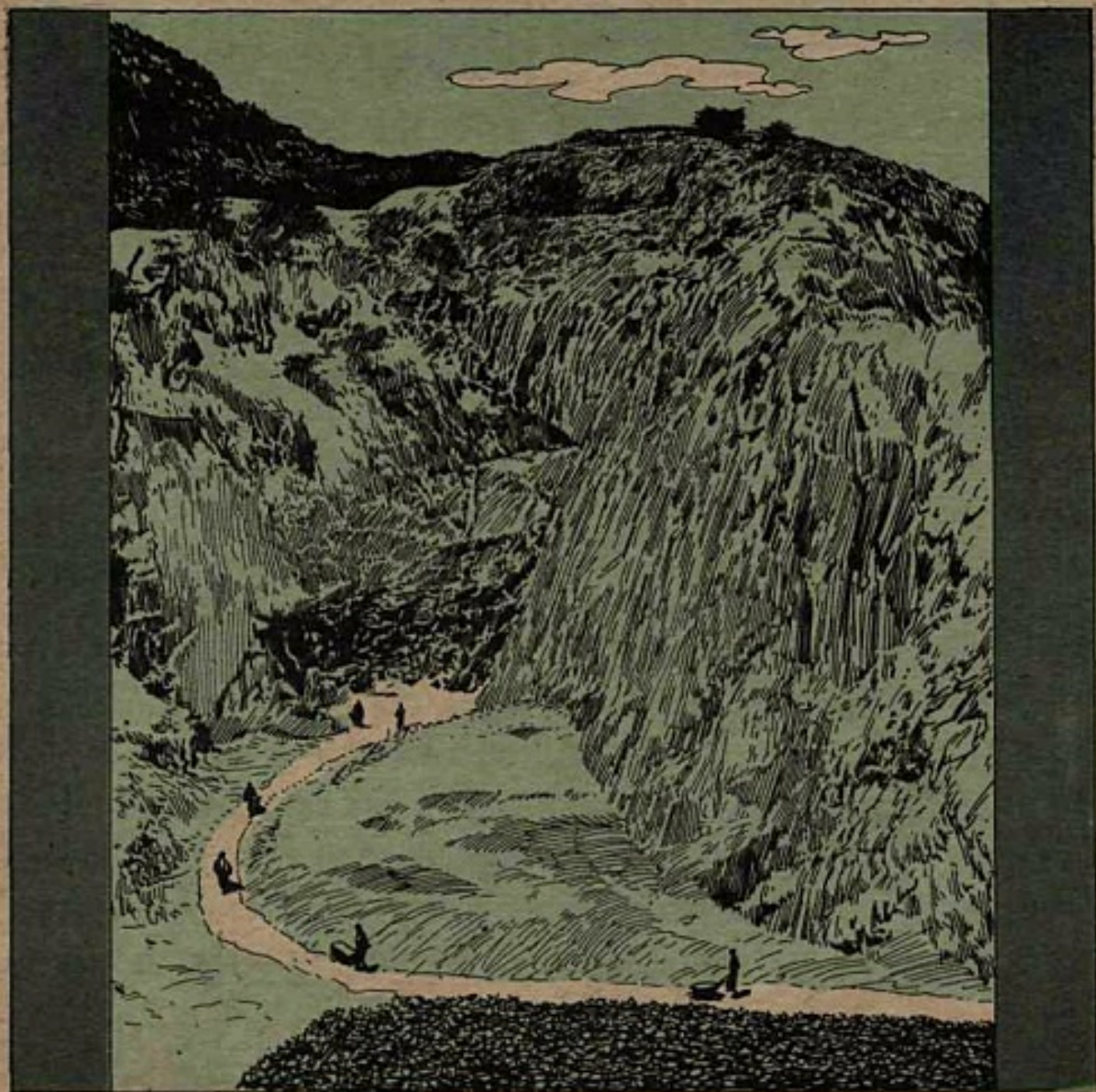
वीरदास का भूत

एक गाँव में वीरदास नामक एक किसान था। उसकी पत्नी का नाम जमुना बाई था। उन्हें किशनदास नाम का एक पुत्र था जो देखने में अपने पिता जैसे था।

खेत में रोपाई चल रही थी। एक दिन सवेरे ही वीरदास अंधेरे में खेत की ओर चल पड़ा। थोड़ी ही देर बाद चार आदमी वीरदास की लाश को उसके घर उठा लाये। अंधेरे में सांप ने उसे डस लिया था। अड़ोस-पड़ोसियों की मदद से किशनदास ने अपने पिता का दहन-संस्कार संपन्न किया।

वीरदास की पत्नी रो-रोकर बेहोश हो गई। उसने अलसाई नींद में एक सपना देखा। उसका पति भूत बनकर विकृत रूप से हंसते, उल्लू की तरह चीखते, श्मशान के पास के बरगद पर उड़ता जा रहा है। यह सपना देख वह डर के मारे चिल्ला उठी। अड़ोस-पड़ोस की औरतों ने जो उसको सांत्वना देने आई थीं, सब ने पूछा–"बहन, तुम ने कोई डरावना सपना तो नहीं देखा?"

"मेरा पति भूत बन गया है!" इन शब्दों के साथ जमुनाबाई ने अपने सपने का सारा वृत्तांत कह सुनाया।

वीरदास की मृत्यु के तीसरे दिन श्मशान के पास बरगद के नीचे बेहोश पड़े एक बनिये को गाँववाले उठा लाये। उसकी सेवा-शुश्रूषा करने पर वह होश में आया। बनिया पहले पथराई आँखों से देख फिर आस्वस्त हुआ, तब पिछली रात का समाचार सुनाया।

वह बनिया समीप के गाँव का निवासी था। वह अपनी दूकान के लिए आवश्यक सारी चीजें उसी गाँव से सदा ख़रीदकर ले जाता था। उस दिन भी बहुत ही

मंगलनाथ वर्मा

तड़के उठकर माल लाने वह उस गाँव के लिए चल पड़ा। उस रास्ते से वह भली भांति परिचित था। अक्सर वह वक़्त-बे वक़्त उस गाँव में आता-जाता था। उस दिन श्मशान के पास पहुँचते ही उसे सियारों तथा उल्लुओं की भयंकर आवाज़ें सुनाई दीं। बरगद के पत्तों की जलजल ध्वनि आई। बरगद की जटा पकड़कर कोई सफ़ेद धोती व कुर्ता पहने झूलते से दिखाई दिया। पहले से ही बनिया भूतों से डरता था। तिस पर वह भूत गरज उठा–"अरे बनिये! तुम अपना सारा धन देते जाओ! मेरी पत्नी व लड़के का भी तो पेट भरना है! जानते हो, मैं कौन हूँ? मेरा नाम वीरदास है!"

थोड़ी देर बाद बनिया होश में आया। बनिये की बातों पर गाँववालों का विश्वास जम गया। बनिये के धन के वास्ते गाँववालों ने जमुनाबाई के घर की तलाशी ली। मगर उन्हें एक कौड़ी भी न मिली।

जमुनाबाई अपमानित हो फूट-फूटकर रो पड़ी। इस बात की व्यथा उसे सताने लगी कि साधू प्रकृति का उसका पति न केवल भूत बन बैठा, बल्कि रास्ता चलनेवाले मुसाफ़िरों को भी लूट रहा है!

उस दिन से जमुनाबाई के प्रति गाँववालों के व्यवहार में परिवर्तन हुआ। सब ने उसके साथ बोलना-चालना तक बंद किया। उसे देखते ही अपना मुंह

मोड़ लेते थे। यह बात जमुनाबाई के लिए और भी पीड़ादायक थी।

दूसरे दिन रात बीते कोई औरत पड़ोसी गाँव से आ रही थी। भूत ने उसके सारे गहने लूटकर कहा था–"ये गहने मेरी पत्नी धारण करेगी तो और सुंदर दिखाई देगी।"

दूसरे दिन फिर गाँववालों ने जमुनाबाई के घर की तलाशी ली, पर कोई चीज़ न पाकर धमकी देने लगे–"तुम्हारा पति इस गाँव के लिए एक अभिशाप बना हुआ है, उसको यहाँ से भगा दो, वरना तुम्हारी ख़ैर नहीं।"

जमुनाबाई की समझ में कुछ न आया। लोग अब भी समझते हैं कि उसका उसके पति के साथ संबंध है। उस भूत से कैसे कहे कि वह इस गाँव को छोड़ चले जाय!

इसके बाद तीन और लोगों को भूत दिखाई दिया। अंधेरे के फैलते ही गाँव का कोई भी आदमी श्मशान की ओर जाता-आता न था।

गाँववालों ने आपस में सलाह-मशविरा करके जमुनाबाई को चेतावनी दी–"तुम और तुम्हारा बेटा इस गाँव को छोड़कर न जावे तो हमें भूत का यह पिंड छूटेगा नहीं। कल संध्या तक तुम दोनों गाँव छोड़कर न जाओगे तो हम्हीं लोग तुम को यहाँ से भगा देंगे।"

घर-द्वार छोड़कर जाये तो कहाँ जाये! इसलिए जमुनाबाई ने अपने पति से बिनती करने की हिम्मत की और रात के होते ही श्मशान की ओर चल पड़ी। उसे सियारों की चिल्लाहट सुनाई दे रही थी। जब वह बरगद के निकट पहुँची तब पेड़ की डालों में से ये शब्द सुनाई पड़े–"अरी, ठहर जाओ! मेरी पत्नी और पुत्र का पेट कैसे भरे! तुम्हारे पास जो कुछ है, उसे वहाँ पर रख दो। जानती हो, मैं कौन हूँ? मैं वीरदास हूँ!"

जमुनाबाई अवाक् रह गई। वह आवाज़ वीरदास की न थी। वह लौटकर घर चली आई। उसने सारा समाचार अपने

पुत्र किशनदास को सुनाया और कहा– "बेटा! कोई कमबख़्त तुम्हारे पिता को बदनाम कर रहा है। उसको पकड़वा देना है!"

इस पर किशनदास ने एक उपाय सोचा और अपनी मां को बताया। जमुनाबाई ने अपनी सम्मति दी।

दूसरे दिन जमुनाबाई ने गांव वालों से बताया–"हम लोग कल इस गांव को छोड़कर चले जाएंगे।"

उस रात को मां-बेटे ने खाना खाया। किशनदास ने अपने बालों में सफ़ेदी पोत ली, तो वह देखने में वीरदास जैसा था। दोनों श्मशान में पहुँचे। किशन सफ़ेद धोती व सफ़ेद कुर्ता पहने बरगद के खोखले में छिप गया। जमुनाबाई समीप की एक झाड़ी में छुप गई।

थोड़ी देर बाद गांव की ओर एक आदमी सफ़ेद धोती व कुर्ता पहने आ पहुँचा। वह बरगद पर चढ़कर डालों के बीच बैठ गया। तब वह उल्लू की तरह बोला और लोमड़ियों की भाँति चिल्लाया।

जमुनाबाई इसी उद्विग्नता के साथ खोखले की ओर ताक रही थी कि किशन कब बाहर निकलेगा। इतने में वह बाहर आया। पेड़ पर बैठे हुए व्यक्ति से बोला– "अरे बदमाश! तुम मुझे बदनाम करते हो? देखो, अभी मैं क्या करता हूँ? जानते हो, मैं कौन हूँ? मैं वीरदास हूँ।"

ये बातें सुन पेड़ पर बैठा हुआ व्यक्ति काँपकर नीचे आ गिरा। वह छटपटाते हुए बोला–"वीरदास! मुझ से ग़लती हो गई। मुझको माफ़ करो। मेरी हानि न करो! तुम्हारे पैरों पड़ता हूं।"

"मैं तुम्हारी कोई हानि न करूंगा! मगर यह बताओ, आज तक तुमने लोगों को डराकर जो धन लूटा, उसे कहाँ छिपा रखा है?" वीरदास की ये बातें सुन वह व्यक्ति थर-थर काँपते पेड़ की जड़ के निकट खोदने लगा।

अपनी चाल के सफल होते देख जमुनाबाई फूली न समाई, गाँव में जाकर बोली–"मेरे पति को बदनाम करनेवाला धूर्त पकड़ा गया है। आओ, तुम सब खुद अपनी आँखों से देख लो।" इन शब्दों के साथ गाँव के कई लोगों को श्मशान तक बुला ले आई। नकली भूतवाला आदमी मशाल लेकर आनेवाले गाँव के मनुष्यों को देख घबरा गया। उसने तब तक लूटा हुआ सारा माल बाहर निकाला था।

"अबे चोर के बच्चे! यह तुमने क्या किया?" इन शब्दों के साथ गाँव वालों ने उसको मार-पीट कर अधमरा कर दिया।

उस वक़्त पेड़ के खोखले में से किशनदास ने झाँककर देखा और कहा–"यह सब क्या हो रहा है! मैं थोड़ा ऊँघ गया था!"

जमुनाबाई अचरज में आ गई। यह सारा नाटक किशनदास ने ही रचा था। इसके बाद जमुनाबाई ने सारा समाचार लोगों को सुनाया। तब जाकर लोगों की समझ में आया कि वीरदास के भूत ने ही नकली भूत को पकड़वा दिया है। जो माल खो गया था, सब को वापस मिल गया।

गाँव वालों ने जमुनाबाई से माफ़ी माँगकर गाँव न छोड़ने की मिन्नत की। भूत का नाटक रचने वाला व्यक्ति सवेरा होने के पहले ही गाँव छोड़कर भाग गया। इसके बाद किसी ने भी वीरदास के भूत को न देखा।

एक गाँव में श्याम नामक एक संपन्न परिवार का व्यक्ति था। उसके भीम नामक एक पुत्र था। भीम की माता के मरने पर श्याम ने अपने घर की नौकरानी चन्दा के साथ शादी की। चन्दा के एक लड़का हुआ जिसका नाम गंगाराम था।

श्याम राजा के खजाने में मुंशी था। जब वह बूढ़ा हो गया तब उसने नौकरी छोड़ दी। कुछ दिन बाद वह बीमार पड़ा। उसे लगा कि उसकी मौत निकट आ गई है। तब उसके मन में यह चिंता पैदा हुई कि उसके मरने पर भीम चन्दा और उसके लड़के को घर से भगा देगा।

एक दिन श्याम ने भीम को अपने निकट बुलाकर कहा—"बेटा! मेरे मरने पर चन्दा और गंगाराम को घर से निकाल कर मेरी इज्जत धूल में मत मिलाओ। मैं यह मानता हूँ कि उम्र के ढलने के बाद मेरा दूसरा विवाह करना गलत है। तुम्हें उनका पालन-पोषण करने की भी ज़रूरत नहीं। पूरबी दिशा में स्थित एक एकड़ बंजर भूमि तथा उसमें स्थित उजड़े मकान भी उन्हें दे दो।"

भीम ने अपने पिता को वचन दिया कि उसके कहे मुताबिक़ अवश्य करेगा।

इसके बाद श्याम ने चन्दा को निकट बुलाकर एक गत्ते पर चिपकाये अपने चित्र को दिखाते हुए कहा—"भीम जब बड़ा होगा, तब तुम यह चित्र न्यायाधिकारी को दिखाकर उनसे प्रार्थना करो कि इस चित्र में जो गुप्त बात है, उसको अमल करे।" यों सलाह देकर श्याम ने सदा के लिए अपनी आँखें मूंद लीं।

श्याम की मृत्यु के समय गंगाराम पाँच साल का लड़का था। उसके बारह वर्ष की उम्र तक भीम ने अपनी सौतेली माँ

जानकी वल्लभ

तथा गंगाराम को भी अपने ही घर रखा, इसके बाद उन्हें उजड़े मकान में भेज दिया। रोज़ उन्हें खाने-पीने की सामग्री भेजता रहा। लोगों ने जब भीम से पूछा कि यह तुम क्या करते हो? उसने यही जवाब दिया—"यह गनीमत समझो कि मैंने आज तक उन्हें घर में रखकर पाला-पोसा। अब गंगाराम भी बड़ा हो गया है। वह जब तक काम-धंधा करके अपने पैरों पर आप खड़ा न हो जाएगा तब तक मैं चावल-दाल देते जाऊँगा। मैंने अपने पिता को जो वादा किया, उसे निभाऊँगा।"

एक दिन गंगाराम ने अपनी माँ से पूछा—"मैं और भीम दोनों एक ही पिता के पुत्र हैं। बड़े भाई रेशमी कपड़े पहनता है, बढ़िया भोजन करता है, जब कि हम और तुम आधा पेट खाकर इस उजड़ने वाले मकान में क्यों रहे?"

गंगाराम की माँ कोई जवाब न दे पाई। इस पर गंगराम ने भीम से पूछा।

"मेरे पिताजी जानते थे कि तुम बड़े हो जाने पर यों अंट संट के सवाल पूछ बैठोगे? इसीलिए उन्होंने तुम्हें उस उजड़े मकान में रहने को कहा है। मैं उनके कहे मुताबिक़ कर रहा हूँ। तुम्हें संदेह हो तो जाकर उन्हीं से पूछ लो।" भीम ने समझाया।

चन्दा ने एक दिन अपने पति के दिये चित्र को निकाला। उसमें गत्ते पर चिपकाये श्याम के चित्र को छोड़ कुछ न था। उसे न्यायाधिकारी के पास ले जाकर चन्दा ने अपने पति की बताई सारी बातें उन्हें सुनाईं।

न्यायाधिकारी ने चित्र को इधर-उधर उलट-पलट कर देखा और उसको गत्ते से अलग किया। चित्र के पीछे यों लिखा हुआ था :—

"न्यायाधिकारी की सेवा में श्याम का निवेदन है कि मैंने अपने बड़े पुत्र भीम से कहा था कि यदि वह मेरे छोटे पुत्र गंगाराम को जायदाद में से हिस्सा न दे तो

कम से कम उसको पूर्वी दिशा में स्थित एक एकड़ बंजर भूमि के उजड़े मकान में रहने दे। गंगाराम के युक्त वय के होने पर आप कृपया गवाहों के समक्ष यह साबित करे कि उस ज़मीन पर भीम को कोई हक़ न होगा। तब उसे गंगाराम को सौंप दे। इसी चित्र को मेरी आत्मा मानकर मेरी इस प्रार्थना को अमल करने की कृपा करें–आप का श्याम।"

न्यायाधिकारी थोड़ी देर सोचता रहा, फिर पाँच बुजुर्गों को साथ ले भीम के घर पहुंचा। उसने कहा–"भीम! तुम्हारे पिता ने मुझे दर्शन देकर तुम्हारे घर का हुलिया बताया, इसलिए मैं तुम्हारे घर आया। तुम्हारे एक भाई और चाची हैं न?"

"जी हाँ! मैंने अपने पिता के कहे अनुसार पूर्वी दिशा के एक एकड़ बंजर भूमि में उन्हें रहने दिया।" भीम ने जवाब दिया।

"यह बात तो सही है, पर तुम्हारे पिता कहते हैं कि यदि तुम्हें पसंद हो तो न्यायपूर्वक उन्हें तुम्हारे पिता की जायदाद में से आधी संपत्ति दे सकते हो! यदि तुम ऐसा देना नहीं चाहते हो तो उस बंजर भूमि को ही सही, उन्हें लिखितपूर्वक दे तो अच्छा होगा!" न्यायाधिकारी ने कहा।

इस वक़्त वे जिस जगह रहते हैं, उस एक एकड़ को मकान के साथ में लिखितपूर्वक उनके नाम लिखकर दे सकता हूँ। इस से अधिक में कुछ दे नहीं सकता।" भीम ने कहा।

भीम के हाथों से न्यायाधिकारी ने इस आशय का पत्र लिखाया कि उस एक एकड़ बंजर भूमि तथा उसमें रहने वाले उजड़े मकान पर उसके कोई अधिकार नहीं हैं, उस जायदाद पर समस्त अधिकार गंगाराम के हैं, । यों भीम को मनवाया।

इसके बाद न्यायाधिकारी ने उन बुजुर्गों के समक्ष मकान की दीवारें तुड़वा दीं, तब श्याम के द्वारा उसमें छिपाये गये चाँदी व सोना निकला। उस संपत्ति को लेकर चन्दा तथा गंगाराम सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगे।

असली चोर

एक गाँव में कामेश्वरी नामक एक औरत थी। उसके छे साल का एक लड़का था। वह एक दिन गलियों में खेलने जा रहा था। रास्ते में कोई चीज़ चमकती दिखाई दी। वह एक सोने की अंगूठी थी। लड़का अंगूठी को लेकर घर की ओर दौड़ पड़ा।

रास्ते में एक चबूतरे बैठे कनकवर्मा नामक व्यक्ति ने लड़के को झुककर कोई वस्तु लेकर भागते हुए देखा। उसने लड़के को रोककर पूछा—"अरे, यह तुम्हारे हाथ में कौन चीज़ है? दिखाओ तो? भागते क्यों हो?"

लड़के ने मुट्ठी खोलकर अंगूठी दिखाई और कहा कि वह अंगूठी उसे रास्ते में मिल गई है।

"अबे, यह अंगूठी लेकर तुम क्या करोगे? यह पैसे ले जाओ, मिठाई खरीद कर मजे से खा लो।" यों कहते कनकवर्मा ने लड़के के हाथ से अंगूठी ज़बर्दस्ती ले ली और उसके हाथ में सिर्फ़ एक पैसा रख दिया।

लड़का मिठाई खरीद कर घर भाग गया।

"अरे, यह मिठाई तुम्हें किसने दी?" माँ ने लड़के से पूछा।

"मैंने खरीद ली है!" लड़के ने जवाब दिया।

"तुम्हें पैसे कहाँ से मिले?" माँ ने पूछा।

"कनकवर्मा दादा ने एक पैसा दिया था।" लड़के ने जवाब दिया।

"अरे दुष्ट! तुम सारे गाँव वालों से भीख माँगते हो? तुम्हें शर्म नहीं लगती?" माँ ने बिगड़कर पूछा। "मैंने किसी से भीख नहीं माँगी। कनकदादा ने

लीला बागड़ी

अंगूठी लेकर पैसा दिया।" लड़के ने असली बात बताई।

"अंगूठी कैसी?" माँ ने नाराज़ होकर फिर पूछा।

लड़का सहम गया और उसने सारी बात बताई।

कामेश्वरी को कनकवर्मा पर क्रोध आया। उसने कनकवर्मा के निकट जाकर पूछा—"अजी! यह तुम कैसी बदमाशी करते हो? मैंने जी-तोड़ मेहनत करके पैसे जुटाये और प्रेम से लड़के को अंगुठी बनाकर पहना दी-। तुम उसके हाथ एक पैसा थमाकर अंगूठी हड़प लेते हो?" यों कामेश्वरी झगड़े पर तुल गई।

"बहन, यह तुम क्या कहती हो? अंगूठी कैसी? हड़पना कैसा? लड़का समझ कर मैंने उसके हाथ में मेहरबानी करके एक पैसा रख दिया। बस, इससे ज्यादा मैं कुछ नहीं जानता!" कनकवर्मा ने सफ़ाई दी।

कामेश्वरी चुप रहनेवाली न थी। वह बात का बतंगड़ बनाते ज़ोर ज़ोर से गाली देने लगी। उसकी चिल्लाहट को सुनकर आस पास के कई लोग वहाँ जमा हो गये।

उसी वक़्त एक बुजुर्ग अपनी जेबें टटोलते उधर आ निकला। उसने नम्रतापूर्वक

पूछा—"थोड़ी देर पहले इधर से गुज़रते मैंने अपनी अंगूठी खो दी है। आप में से किसी के हाथ पड़ गई हो तो कृपया दे दीजिए।"

वहाँ पर इकट्ठे हुए लोग समझ गये थे कि कामेश्वरी और कनकवर्मा झगड़ते क्यों है? उन लोगों ने असली बात उस बुजुर्ग के कानों में डाल दी।

उसने कामेश्वरी तथा कनकवर्मा से कहा—"तुम भी कैसे अजीब आदमी हों! किसी की चीज़ के लोभ में पड़कर झगड़ रहे हो? वह अंगूठी तो मेरी है? उसे मुझे दे दो और चुपचाप अपने घर चले जाओ।"

कामेश्वरी और कनकवर्मा ने एक दूसरे के चेहरे को देखा, फिर झट दोनों ने बात बदल दी।

"वाह, आप कैसे अजीब आदमी निकले? हम बच्चों की बात को लेकर झगड़ रहे थे! बीच में तुम आकर हम्हीं को डाँट रहे हो? जाओ, जाओ, तुम्हारी अंगूठी यहाँ किसी के हाथ नही लगी है।" दोनों ने एक स्वर में कहा।

वह बुजुर्ग दुनियादारी का काफ़ी तजुर्बा रखता था। उसने कहा—"ओह! तुम लोगों की यह चाल है! गाँव के मुखिये के पास चलो। वहीं पर तुम लोगों का सच्चा फ़ैसला हो जाएगा।"

मुखिये का नाम सुनते ही दोनों के दिल धड़क उठे। फिर भी वे अंगूठी से हाथ धो बैठना नहीं चाहते थे। वे उस बुजुर्ग के साथ मुखिये के पास पहुँचे।

मुखिया गाँव का न्यायाधिकारी था। वह घूसखोर था और उसके फ़ैसले पक्षपातपूर्ण होते थे। फिर भी ग्रामवासियों में कोई भी राजा से शिकायत करने की हिम्मत नहीं रखता था।

बुजुर्ग ने मुखिये से अपनी अंगूठी की बात बताई। कामेश्वरी तथा कनकवर्मा ने साफ़ बताया कि वे अंगूठी की बाबत बिलकुल नहीं जानते। वह बुजुर्ग अकारण उन्हें बदनाम कर रहा है। मगर गाँव का मुखिया भी धोखेबाज था। उसने धोखे को भाँप लिया और असंख्य सवाल करके उनसे सच कहलवाया। इस पर कामेश्वरी तथा कनकवर्मा ने बीस-बीस रुपये जुर्माने भर दिये और अंगूठी मुखिये के हाथ देकर चले गये।

उनके चले जाने पर बुजुर्ग ने मुखिये से कहा—"आप ने मेरी बड़ी सहायता की है। मुझे अपनी अंगूठी दे दें तो मैं अपने रास्ते चला जाऊँगा।"

मुखिये ने हँसकर कहा—"ऐसी जल्द-बाजी करेंगे तो काम कैसे चलेगा? आप इस अंगूठी को ले जायेंगे, कल कोई दूसरा

आकर उसे अपनी बतावे तो मुझे जवाब क्या देना होगा? आप कोई विश्वसनीय प्रमाण देकर इसे लेते जाइए। तब तक यह अंगूठी मेरे पास ही रहेगी।"

लाचार होकर वह बुजुर्ग चला गया।

उस दिन रात को गाँव का मुखिया सुनार राधाचरण के घर जाकर बोला–"सुनो राधाचरण! मुझे बहुत जरूरी काम आ पड़ा है, पर कर्ज लेने की मेरी आदत नहीं है। इसलिए मैं अपनी पत्नी के हाथ की अंगूठी ले आया हूँ। इसकी क़ीमत मुझे दे दो।"

राधाचरण ने अंगूठी को उलट-पलट कर देखा, तब कहा–"यह अंगूठी बड़ी क़ीमती है, कम से कम चार सौ की होगी। मेरे पास इस वक़्त दो सौ रुपयों से ज़्यादा नहीं है। आप इसे और किसी के पास ले जाइए।"

मुखिये ने सोचा कि यह बात तीसरे व्यक्ति पर भी प्रकट क्यों हो, राधाचरण से बोला–"राधाचरण, कोई बात नहीं! तुम्हारे पास जो कुछ है, दे दो, बाक़ी रुपयों का इंतज़ाम कल शाम तक करो।"

राधाचरण दो सौ रुपये ले आया। मुखिये ने रुपये लेते हुए कहा–"राधाचरण, यह बात और कहीं मत बताओ। मेरे लिए अपमान की बात होगी।"
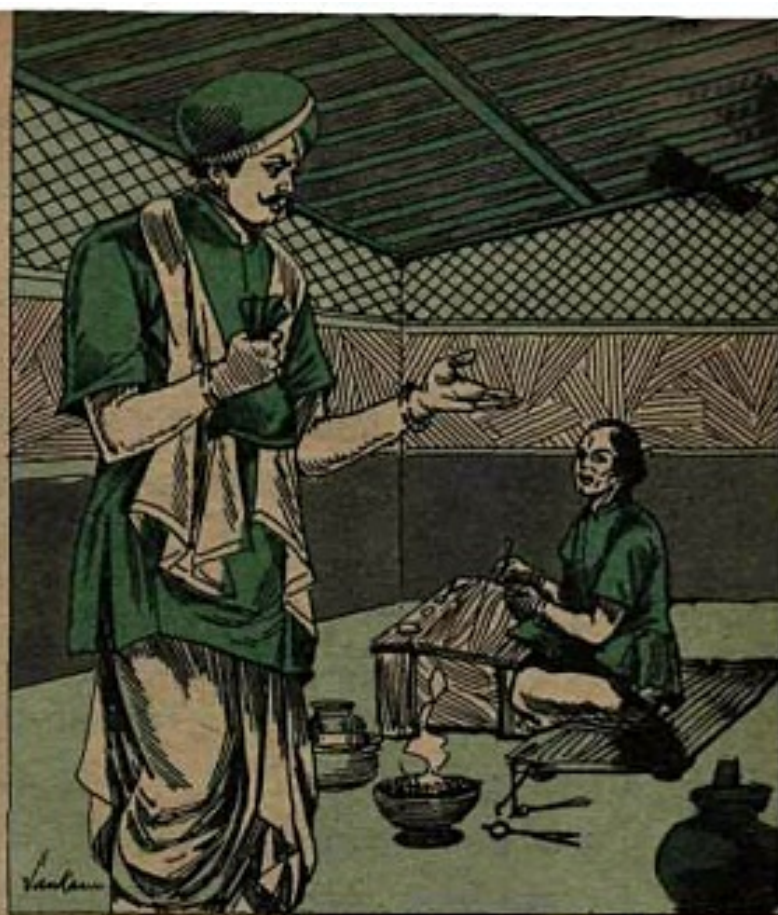
दूसरे दिन शाम को मुखिये ने राधाचरण के घर पहुँचकर बाक़ी रुपये माँगा।

"रुपये? कैसे रुपये? मुझे आप को देना किस लिए?" राधाचरण एक साथ कई सवाल पूछ बैठा।

"राधाचरण! मुझ को धोखा देने की कोशिश मत करो। मैं राजा से फ़रियाद करके तुम्हारा सिर तुड़वा सकता हूँ!" मुखिये ने धमकी दी।

पर राधाचरण ज़रा भी विचलित न हुआ। वह मुखिये के साथ दरबार में गया और राजा के सामने मुखिये की फ़रियाद को सत्य स्वीकार किया। राजा ने राधाचरण को जुर्माना लगाया।

"महाराज! जैसे आप अन्य सभी धोखेबाजों को जुर्माना लगा रहे हैं, वैसे ही इस मुखिये को भी जुर्माने का दण्ड दीजिए।" राधाचरण ने कहा।

"मुखिये ने कैसा धोखा दिया है?" राजा ने विस्मय में आकर पूछा।

राधाचरण ने अंगूठी की कहानी आदि से अंत तक राजा को सुनाई, पर मुखिये ने उसको झूठ बताया।

इस पर राधाचरण ने यों बताया; "मैंने यह अंगूठी एक राजकर्मचारी के लिए बनाकर दी है। वह नकली अंगूठी थी। उन्होंने मेरे पास आकर स्पष्ट बताया कि उनकी पत्नी हीरे की अंगूठी चाहती हैं, मगर उसकी आर्थिक क्षमता इस योग्य नहीं है, अतः मैंने सस्ते में उन्हें नक़ली हीरे की अंगूठी बनाकर दी है। उसे घर ले जाते हुए उन्होंने खो दी है। धोखा देकर मुखिये साहब ने उस अंगूठी को हथिया लिया है। मैं जिन राजकर्मचारी का नाम लिया है, वे इस वक़्त दरबार मे मौजूद हैं।"

राधाचरण के मुँह से ये शब्द निकलते ही राजकर्मचारी उठ खड़ा हो गया। उसने राधाचरण की बातों का समर्थन किया। मुखिये की इस प्रवंचना पर राजा क्रुद्ध हो उठा, फिर राधाचरण से कहा— "तुम भी तो दगाखोर हो!"

राधाचरण ने हँसकर बताया—"हमारे गाँव के अधिकारी इस प्रकार की धाखाधड़ी तथा अन्यायपूर्ण फ़ैसले अनेक वर्षों से करते आ रहे हैं। इस वक़्त उन्हें प्रकट करने का मुझे अच्छा मौक़ा मिला, इसीलिए मैंने यह नाटक रचा। यदि मैं दगाखोर हूँ तो क्या उस नक़ली अंगूठी के लिए दो सौ रुपये देता?"

यह बात राजा को उचित लगी, राधाचरण की बुद्धिमत्ता की राजा ने तारीफ़ की, मुखिये के द्वारा राधाचरण को एक हज़ार रुपये दिलाये। इसके बाद गाँव के अधिकारी को न केवल अपने पद से हटाया बल्कि उसे कठोर दण्ड भी दिया।

सच्चा भक्त

एक गाँव में शिवप्रसाद पांड़े नामक एक साधारण गृहस्थ था। उसने जीवन के सभी प्रकार के सुख-दुख भोगे थे। जब उम्र ढलने को हुई तो गृहस्थी के प्रति उसके मन में विरक्ति पैदा हुई। उसने निश्चय कर लिया कि परिवार के सभी बंधनों को तोड़ काशी चले जावे और ईश्वर के दर्शन कर मुक्ति प्राप्त कर ले। एक अच्छा मुहूर्त देख काशी के लिए चल पड़ा।

रास्ते में शिवप्रसाद से तीन और यात्री आ मिले। वे तीनों एक ही गाँव के निवासी थे। एक था गणपत गुप्त, जो सोने-चांदी का व्यापार करता था। उसने इस व्यापार में लाखों रुपये कमाये थे। मगर उसे मानसिक शांति न थी, इसलिए पुण्य प्राप्त करने के ख्याल से काशी की यात्रा पर निकल पड़ा था।

बाक़ी दोनों सगे भाई थे। बड़ा भाई सूरजसिंह धन कमाने के लिए तथा छोटा भाई चन्द्रभान पांडित्य प्राप्त करने के लिए काशी जा रहे थे।

चारों मिलकर थोड़े दिन यात्रा कर के आखिर एक जंगल में पहुँचे। जंगल में थोड़ी दूर जाने पर उन्हें एक झाड़ी में चमकनेवाली कोई चीज़ दिखाई दी। उसके चारों तरफ़ एक मनुष्य की खोपड़ी और हड्डियाँ फैली थीं।

उसे देखते ही शिवप्रसाद को छोड़ बाक़ी तीनों की आँखें चमक उठीं। वे तीनों एक साथ झाड़ी की ओर झपट पड़े। जौहरी गणपत गुप्त ने हीरे को अपने हाथ में लेकर परख कर देखा और कहा—"यह हीरा असाधारण है। इसका मूल्य लाखों रुपये होगा। लगता है कि इस हीरेवाले को किसी शेर ने मार डाला है।"

सरोज कुमार मिश्र

हीरे की क़ीमत के मालूम होते ही तीनों कल्पना के महल बाँधने लगे ।

सूरजसिंह ने सोचा–"इस हीरे में चारों का हिस्सा होगा । उसकी क़ीमत में से चौथा हिस्सा मुझे मिल जाएगा । उस धन से मैं घर पर ही व्यापार कर सकता हूं ! इसलिए व्यापार करने के वास्ते काशी तक जाने की क्या ज़रूरत है ? यहीं से मैं लौट सकता हूं ।"

चन्द्रभान ने सोचा–"काशी में जाकर पांडित्य प्राप्त कर लूं, फिर भी धन-संपादन ही तो मेरा लक्ष्य है । इस हीरे की क़ीमत में से मुझे जो हिस्सा मिलता है, उस पूंजी को लेकर मैं भी बड़े भाई के साथ मिलकर व्यापार करूँ तो बहुत बड़ा लाभ होगा । मुझे कहीं भी आचार्य पीठ भले ही मिल जाय, उतना धन तो ज़िंदगी भर मगज़पच्ची करूँ तब भी तो प्राप्त न होगा ।"

गणपत गुप्त ने पुण्य कमाने की बात भूल कर यों सोचा–"इस हीरे को मैं सस्ते दाम खरीद लूं तो, इसे अच्छे मूल्य पर बेचकर बहुत बड़ा लाभ उठाया जा सकता है ।"

मगर हीरे को देख शिवप्रसाद जरा भी विचलित न हुआ । वे मौत मरे किसी आदमी की हड्डियों के बीच दीखनेवाले उस हीरे को देखते ही उसके मन में जुगुप्सा पैदा हुई । फिर भी उसने यही सोचा कि बाक़ी लोग जो निर्णय करे, उसको मान ले ।

उन लोगों ने सोचा कि निकट में कोई शहर हो तो किसी जौहरी के पास जाकर उस हीरे का मूल्य अंकवाया जाय । सब से छोटे चन्द्रभान ने एक बरगद पर चढ़ कर चारों ओर देखा, पेड़ से उतरकर बताया कि जहाँ तक दृष्टि जाती है, एक भी गाँव या शहर नहीं है ।

शाम हो गई थी, इसलिए चारों ने पेड़ के नीचे पड़ाव डाला । हीरे को उस पेड़ के खोखले में रख दिया । सूखी

लकड़ियाँ लाकर आग जलाई। खूँख्वार जानवरों से बचने के लिए रात भर बारी-बारी से वे लोग पहरा देने लगे।

सुबह उठकर उन लोगों ने देखा। चन्द्रभान गायब था। पेड़ के खोखले में हीरा भी न था। यह सोचकर बाक़ी तीनों ने अपनी यात्रा चालू की कि चन्द्रभान हीरा लेकर भाग गया होगा।

थोड़ी दूर जाने पर उन्हें चन्द्रभान की लाश दिखाई दी। उसका शरीर काला पड़ गया था। मुँह से झाग निकल रहा था, उसके हाथ में हीरा चमक रहा था।

अपने छोटे भाई की लाश को देख सूरज सिंह ने आँखों में आँसू भरकर कहा– "अगर वह ज़िंदा रहता तो खूब पढ़-लिख कर आचार्य बन जाता। उसकी वक्र बुद्धि ने ही साँप के रूप में उसको डस लिया है।"

गणपत गुप्त ने सूरज सिंह को सांत्वना दी। पर चन्द्रभान की लाश को देख शिवप्रसाद थर थर काँप उठा। हीरे को देखते ही उसके शरीर में कंपकंपी पैदा होने लगी।

तीनों ने मिलकर चन्द्रभान की लाश को जलाया। फिर यात्रा चालू करके आखिर एक बड़े शहर में पहुँचे। शहर के समीप की एक सराय में ठहर गये। शिवप्रसाद ने अपने लिए एक कमरा लिया तो सूरजसिंह तथा गणपत गुप्त ने दूसरा कमरा लिया। शिवप्रसाद अकेले ही रहना चाहता था, इसलिए उसने अपने लिए अलग कमरा

लिया था। उसने अपने मन में यह निश्चय कर लिया कि सवेरा हो जाने पर बाक़ी दोनों से यह कह देगा कि हीरे में उसे हिस्सा नहीं चाहिए।

उस रात को सूरजसिंह तथा गणपत गुप्त ने हीरा अपने पास रख लिया, इस पर प्रसन्न होते हुए यह योजना बना ली कि हीरे के मूल्य में से हिस्सा देने से बचने के लिए दोनों सवेरा होने के पहले ही भाग निकलेंगे। मगर वे यह बात नहीं जानते थे कि किवाड़ की दरार में से किसी की आँखें हीरे को देख रही हैं।

सवेरा होते ही शिवप्रसाद नींद से जाग उठा। अपना निर्णय दोनों यात्रियों को सुनाने के लिए उनके कमरे में पहुँचा। पर आश्चर्य की बात थी कि वे दोनों मरे पड़े थे। उसने सारे कमरे में हीरे को ढूंढ़ा, कहीं वह दिखाई न दिया। उस हीरे के वास्ते किसी ने उनकी हत्या की थी। इससे शिवप्रसाद के मन में हीरे के प्रति और घृणा पैदा हो गई।

इसके बाद शिवप्रसाद अकेले ही काशी के लिए चल पड़ा। शहर को पार करते ही उसे यात्रा पर जानेवाले बैरागियों का एक दल दिखाई पड़ा। उनकी लंबी-लंबी दाढ़ियाँ एवं जटाएँ थीं। उनके भालों पर भभूत की रेखाएँ फैली थीं। हाथों में रुद्राक्ष मालाएँ पड़ी थीं। देखने में वे लोग शांत प्रकृति के प्रतीत हुए। जब से वह बैरागियों से मिला, तब से भगवान के प्रति उसका मन लग गया। यात्रा को सुगम बनाने के हेतु बैरागी तरह-तरह के गीत गाते रहे। कुछ लोग चलते चलते नाच भी रहे थे। उनके साथ चलनेवाले शिवप्रसाद को एक झाड़ी में कोई चीज़ चमकते दिखाई दी। उसके चारों तरफ़ एक खोपड़ी तथा हड्डियाँ भी फैली थीं। शिवप्रसाद ने चट से अपना मुँह मोड़ लिया, जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाते बैरागियों से जा मिला। फिर क्या था, बैरागियों के साथ उसकी यात्रा आराम से समाप्त हुई।

स्वयंप्रभा की कृपा से वानरों ने सुरंग से बाहर आकर देखा। सामने उत्तुंग लहरें मारते समुद्र गरज रहा है। वे सब विन्ध्याचल की नैऋत दिशा में फूलों के पेड़ों के नीचे एक टीले पर इकट्ठे हो विचार-विमर्श करने लगे। क्यों कि सुग्रीव ने जो अवधि निश्चित की थी, वह बीत चुकी थी। इसलिए सुग्रीव के नाराज हो जाने की आशंका से वे भयभीत थे।

उस स्थिति में युवराज अंगद ने अन्य वानरों को लक्षित कर यों कहा–"वानर वीरो! तुम सब जानते हो कि सुग्रीव ने हमें जो अवधि दी थी, वह हमारे ऋक्ष बिल में रहते समय ही बीत चुकी है। सब से पहले हनुमान की सूचना पर सुग्रीव ने हमें पंद्रह दिन की मीयाद देकर बुला भेजा। यह आश्विन मास की बात थी। इसके बाद लक्ष्मण जब नाराज़ हो कर आये, तब फिर सुग्रीव ने हमें दस दिन की मोहलत देकर बुला भेजा। इसके बाद हमें लौट आने की एक महीने की अवधि निर्धारित की। वह भी बीत चुकी है। अब आप ही लोग बताइए कि हमें क्या करना होगा। सीताजी का पता तो नहीं लग रहा है। हमने दो प्रकार से सुग्रीव की आज्ञा का उल्लंघन किया है। सुग्रीव अत्यंत क्रूर स्वभाव के हैं। इसलिए वे हमको अवश्य मार डालेंगे। वहाँ पहुँच कर भयंकर मौत मरने की अपेक्षा यहीं पर अनशन करके प्राण त्यागना कहीं

९. संपाती की कहानी

उत्तम है। साथ ही मेरे प्रति सुग्रीव के मन में सद्भावना नहीं है। मुझको श्री रामचन्द्र ने युवराजा बनाया है, सुग्रीव ने नहीं। इसलिए बहाना मिल जाने पर सुग्रीव मेरा वध किये बिना नहीं छोड़ेंगे। में किष्किधा में जाकर अपने आत्मीय लोगों के बीच क्यों अपमानजनक मृत्यु को प्राप्त करूँ? इस कारण मैं यहीं पर अनशन व्रत कर के इस समुद्र तट पर मर जाऊँगा।"

अंगद की बातें सुनकर सारे वानर वीर दुख में डूब गये, और बोले–"अगर हम सीताजी का पता लगा सकेंगे तो सुग्रीव के पास जायेंगे, वरना यहीं पर मर जायेंगे।"

"हम लोग यहाँ पर मरे ही क्यों? इस सुरंग में जाकर आराम से अपने दिन काटेंगे। तुम सब चिंता न करो। हमारे खाने-पीने की यहाँ पर कमी नहीं है। अलावा इसके यहाँ पर हमें श्री रामचन्द्र अथवा सुग्रीव का भी कोई ड़र नहीं है।" तार ने समझाया।

ये सारी बातें सुनकर हनुमान ने मन में सोचा–"सुग्रीव के वानर राज्य को अंगद जरूर हड़प लेगा। वाली का पुत्र अंगद अत्यंत मेधावी है। देश और काल की स्थिति से वह भली-भांति परिचित है।" फिर उसने प्रकट रूप में अंगद से कहा–"हे अंगद! तुम युद्ध विद्या में अपने पिताजी से भी कहीं श्रेष्ठ हो! फिर भी यह बात भली भाँति गांठ बाँध लो कि चंचल चित्तवाले ये सारे वानर सदा तुम्हारा साथ न देंगे। इनके परिवार हैं, पत्नी व बच्चे हैं। मुझ को, जांबवान तथा अन्य वानरों को तुम सुग्रीव के साथ वैमनस्य पैदा कर अपने पक्ष में नहीं ले सकते। यह ऋक्ष बिल लक्ष्मण के बाणों के लिए अभेद्य नहीं हो सकता। वह इसको एक पत्ते के समान भेद सकते हैं। असली बात यह है कि तुम सुग्रीव के साथ शत्रुता मोल कर इस सुरंग में प्रवेश करोगे तो सारे वानर तुम्हारा साथ छोड़ देंगे। तब तुम्हारा मूल्य एक तिनके के

बराबर भी न होगा। श्री रामचन्द्र और लक्ष्मण तुम्हें प्राणों के साथ न छोड़ेंगे। सुग्रीव धर्मात्मा हैं। वे तुम से वैरभाव नहीं रखते। उल्टे तुम्हारी माता पर अत्यंत प्रेम भाव रखते हैं। इसलिए तुम को वे अपने पुत्र के समान ही मान लेंगे।"

हनुमान की बातों पर अंगद ने विश्वास नहीं किया। उसने कहा–"सुग्रीव के भीतर कोई अच्छा गुण नहीं है। उसके भाई वाली ने उसको गुफा के मुख पर पहरे पर तैनात किया और यह आदेश दिया कि किसी शत्रु को भीतर घुसने न दे, तब वे गुफा के भीतर चले गये। मगर सुग्रीव ने दुर्बुद्धि से प्रेरित होकर गुफ़ा के मुंह को चट्टान से बंद किया। रामचन्द्रजी के द्वारा उपकार पाकर भी प्रत्युपकार करने की बात भूल गया। आखिर सीताजी का अन्वेषण भी लक्ष्मण के ड़र से करा रहा है। ऐसे व्यक्ति के प्रति मैं ने अब सब के सामने जो विचार प्रकट कियां, सुग्रीव को यह बात मालूम होने पर क्या मैं जिंदा रह सकता हूँ? मैं किष्किधा को नहीं लौटूंगा। यहीं पर अनशन करूँगा। आप सब किष्किधा को लौट जाइए। श्री रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मणजी से यह बताइए कि मैं ने उनके कुशल-क्षेम का

पता लगाया है और उसके प्रति मेरे मन में कोई दुर्भावना नहीं है।"

इसके बाद अंगद ने अपनी माता तारा का स्मरण करते दुख प्रकट किया। बूढ़े वानरों को प्रणाम किया। पृथ्वी पर दाभ बिछा कर उन पर लेट गया। इस दृश्य को देख सारे वानर विलाप कर उठे। वानरों ने सोचा कि अंगद का निर्णय अटल है। उन सबने भी समुद्र में स्नान किया। दाभ बिछा कर लेट गये। इसके उपरांत वे सब आपास में श्री रामचन्द्र के वनवास, सीतापहरण, जटायु की मृत्यु, वाली के वध तथा सीतान्वेषण के संबंध में चर्चा करने लगे।

ये बातें सुन संपाती ने उच्च स्वर में गरज कर कहा–"मेरे छोटे भाई जटायु की मृत्यु का समाचार सुना कर मेरे मन को पीड़ा पहुँचानेवाला व्यक्ति कौन है? जटायु तथा रावण के बीच युद्ध क्यों हुआ? मैं बहुत समय बाद जटायु का नाम सुन रहा हूँ?"

इसके बाद उसने वानरों से कहा– "वानरो! सूर्य की किरणों के तेज से मेरे पंख झुलस गये हैं! मैं इस पहाड़ पर से उतर नहीं सकता, इसलिए तुम लोग मुझको नीचे उतार दो।"

पहले वानर संपाती की बातों पर यक़ीन नहीं कर पाये। मगर बाद को उन्हें लगा कि जब वे लोग मरने के लिए भी बिलकुल तैयार हो गये हैं तब संपाती के द्वारा मारे जाने का ड़र बेकार है।

इस विचार के आते ही अंगद पहाड़ पर जाकर संपाती को नीचे ले आया और उसे सारा वृत्तांत सुनाया:

"इक्ष्वाकुवंशी राजा दशरथ के पुत्र श्री रामचन्द्र अपने पिता की आज्ञा का पालन करने के हेतु अपने छोटे भाई लक्ष्मण तथा पत्नी सीताजी को साथ लेकर दण्डकारण्य में आये। पर्णशाला में रहनेवाली सीताजी को श्री रामचन्द्र की अनुपस्थिति में रावण ज़बर्दस्ती उठा ले

वानरों का कोलाहल सुनकर एक गुफ़ा से एक भयंकर गीध बाहर आया और बोला–"ओह! मुझे तो भर पेट भोजन मिल गया है!" ये बातें सुन वानर एक दम काँप उठे।

अंगद ने मौन भंग करते हुए हनुमान से कहा–"हम लोग बड़ी विपत्ति में फंस गये हैं। यह गीध सूर्य का पुत्र संपाती है। हम लोग यह बात भली भांति जानते हैं कि श्री रामचन्द्रजी के वास्ते जटायु ने रावण के साथ युद्ध करके कैसे अपने प्राण त्याग दिये? हम लोग श्री रामचन्द्रजी की सहायता में अपने प्राण तक अर्पित नहीं कर पाये?"

गया है। रावण जब आकाश मार्ग से जा रहा था, तब दशरथ के मित्र जटायु ने उसको देखा। जटायु ने रावण के साथ युद्ध किया। थोड़ी देर तक सीताजी की रक्षा की और आखिर मर गया। श्री रामचन्द्र ने जटायु का दहन-संस्कार किया। हमारे राज्य में प्रवेश कर के मेरे चचा सुग्रीव के साथ-मैत्री की, मेरे पिता वाली का वध कर के सुग्रीव को वानर राजा बनाया। उसी सुग्रीव की आज्ञा पाकर हम लोग सीताजी की खोज में यहाँ पर चले आये हैं। हमें आज तक सीताजी का पता नहीं लगा है। यदि हम इसी प्रकार वापस लौट गये तो निश्चय ही श्री रामचन्द्र अथवा सुग्रीव के हाथों में मारे जायेंगे।"

इस पर संपाती ने उच्च स्वर में कहा–"वानरो, तुमने रावण के साथ युद्ध करके मरनेवाले जिस जटायु का नाम लिया, वह मेरा छोटा भाई है। मैं वृद्ध हूँ, पंखहीन हूँ, इसलिए रावण का वध कर के बदला न ले सकूँगा। मैं करूँ क्या? जिन दिनों में वृत्रासुर का वध हुआ था, उन दिनों में हम दोनों भाई स्पर्धा में आकर ऊपर उड़ते सूर्य के अति निकट चले गये। सूर्य जब ठीक हमारे सिर पर आये, तब लू खाकर जटायु थक गया।

उस वक्त जटायु को धूप से बचाने के लिए मैंने उसके ऊपर अपने पंख फैलाये। इस वजह से मेरे पंख झुलस गये। मैं विन्ध्याचल पर गिर पड़ा। उस दिन से मैं यहीं रह रहा हूँ। मेरे छोटे भाई का भी समाचार मुझे न मिला।"

ये बातें सुन अंगद ने संपाती से पूछा–"क्या आप जानते हैं कि राक्षस राजा रावण कहाँ पर रहता है?"

"बेटे! मैं ने स्वयं देखा कि वह रावण एक सुन्दर नारी को उठा ले जा रहा था। वह नारी छटपटा रही थी। साथ ही "राम" का स्मरण कर रही थी, इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि वह जरूर सीताजी

ही होंगी। रावण तो लंका नामक नगर में रहता है। वह विश्रवसु का पुत्र और कुबेर का छोटा भाई है। समुद्र के बीच यहाँ से सौ योजन की दूरी पर एक टापू में लंका नगर है। तुम लोग समुद्र को पार कर लंका नगर में पहुँच जाओगे तो तुम्हें वहाँ पर रावण तथा सीता भी दिखाई दे सकते हैं। तुम लोग रामचन्द्रजी के द्वारा रावण का वध कराओगे तो मेरा दिल ठण्डा हो जाएगा! इसलिए तुम लोग समुद्र को पार करने का कोई उपाय सोच लो।" संपाती ने समझाया।

इसके उपरांत वानरों ने संपाती को समुद्र के तट पर पहुँचाया, तब उसने अपने छोटे भाई जटायु के लिए जल तर्पण किये। सीताजी का पता लगने पर वानर बहुत ही आनंदित हुए।

जांबवान ने अन्य वानरों की तरफ़ से संपाती से पूछा कि वह सीतापहरण का समाचार सविस्तार बता दे। तब संपाती ने यों कहा :

"मैं अपने पंखों के झुलस जाने की वजह से इस पहाड़ पर गिर पड़ा। तब से यहीं रह कर मैं वृद्ध हो गया हूँ। इसलिए मेरा पुत्र सुपार्श्व समय पर मुझे खाना लाकर खिलाया करता है। एक दिन वह सूर्यास्त तक न लौटा, देरी से आया, तिस पर भी बिना आहार के। मैं पहले ही वृद्ध हूँ, तिस पर भूखा था, इस कारण उसे डांटा। मुझे शांत करते उसने वास्तविक समाचार सुनाया। उसने कहा कि वह ठीक वक़्त पर ही महेन्द्र पर्वत पर आहार की खोज में पहुँचा। उस वक़्त एक काला व्यक्ति आँखों को चौंधियाने वाली एक नारी को उठा ले जाते उसे दिखाई दिया। मेरा पुत्र उन्हीं को आहार के रूप में पकड़ने के लिए उनका रास्ता रोकने गया। पर उस काले व्यक्ति ने बड़े ही विनीत स्वर में मेरे पुत्र से निवेदन किया कि वह उनके रास्ते से हट जाय! उस की नम्रता को देख मेरे पुत्र ने उन्हें

आगे बढ़ने दिया। तब वह व्यक्ति अत्यंत वेग के साथ चला गया। इसके उपरांत सुपार्स्वं ने आकाश के भूतों मे पूछा तो उन लोंगों ने बताया कि वह काला व्यक्ति राक्षस राजा रावण है और श्री रामचन्द्र तथा लक्ष्मण का नाम लेने वाली वह नारी सीताजी हैं। रावण ज़बर्दस्ती सीताजी को उठा ले जा रहा है। यही मेरे पुत्र के विलंब से लौटने का कारण था।"

इसके उपरांत वानरों ने संपाती को पुनः पहाड़ पर पहुँचा दिया। इस पर अपने चतुर्दिक बैठे हुए वानरों को संपाती ने अपने अनुभव यों सुनाये :

"मैं जब अपने पंख झुलस जाने के बाद इस विन्ध्याचल पर गिरा तब यहाँ पर एक आश्रम था। उसमें निशाकर नामक एक महान महर्षि रहा करता था। यह आठ हज़ार वर्ष पहले की बात है। पर्वत पर गिरने के बाद मैं उतार-चढ़ावों को बड़ी मुश्किल से पार करते हुए उस महर्षि के आश्रम में पहुँचा। वहाँ पर एक पेड़ के नीचे मैं महर्षि के दर्शन के इंतज़ार में बैठा था। उस वक़्त मुझे एक विचित्र दृश्य दिखाई दिया। दक्षिणी दिशा से महर्षि स्नान कर के लौट रहे थे। उनके पीछे भालू, चमरी मृग, बाघ, शेर, हाथी, सर्प इत्यादि चलते मुझे दिखाई दिये। महर्षि के आश्रम में पहुँचते ही वे सारे प्राणी चले गये। निशाकर महर्षि ने आश्रम के भीतर प्रवेश करते हुए मुझे देखा। थोड़ी देर बाद लौट कर बोले—"गीधों के राजा, तुम दोनों भाइयों को मैं जानता हूँ। दोनों में से तुम बड़े भाई संपाती हो न? जटायु तुम्हारे छोटे भाई है न? तुम दोनों जब-तब मानव के रूपों में मुझे दिखाई देकर प्रणाम किया करते थे। तुम कहीं अस्वस्थ तो नहीं हुए हो? तुम्हारे पंख क्यों बेकार हो गये? क्या किसी ने तुम्हें शाप दिया है?"
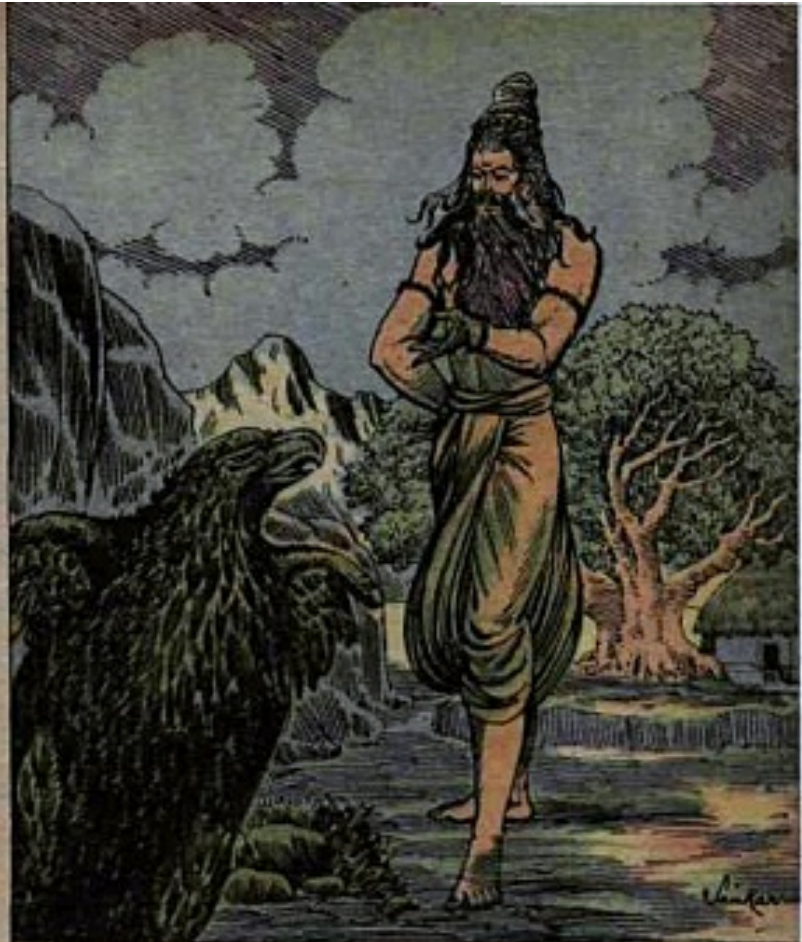
"मैंने महर्षि को सारा वृत्तांत सुनाया। हमने कैलास पर्वत पर ऋषियों के सामने शपथ की कि मैं और मेरे छोटे भाई सूर्यास्त होने के पहले उनके पीछे उड़कर जायेंगे। हम काफ़ी ऊँचाई तक उड़े भी। पृथ्वी पर के सारे गाँव हमें गाड़ी के पहियों जैसे दिखाई दिये। रास्ते में हमें वेदों की ध्वनि सुनाई दी। लाल साड़ियाँ धारण कर गीत गाने वाली नारियाँ दीख पड़ीं। हम और ऊँचे उड़े। जंगल घास के मैदानों जैसे, पर्वत छोटे पत्थरों की भाँति तथा नदियाँ धागों जैसे दिखाई दीं। थकावट के साथ हमें डर, मतिभ्रमण, दृष्टिदोष, बेहोशी जैसे लक्षण दिखाई देने लगे। दिशाओं का पता नहीं लग रहा था। उस ऊँचाई में सूर्य तथा पृथ्वी दोनों एक ही परिमाण में दिखाई दिये।

"इतने में जटायु बेहोश हो नीचे गिरने को हुआ। दूसरे ही क्षण मैंने नीचे उतरते जटायु को अपने पंखों से ढक दिया। उस वक़्त जटायु सूर्य की भीषण गर्मी से बच गया, मगर मेरे पंख जल गये। मैंने सोचा कि जटायु लोगों के बीच गिर गया है। यह सारा वृत्तांत मैंने निशाकर महर्षि को सुनाकर बताया कि जीने की मेरी इच्छा नहीं है और मैं पर्वत पर से कूद कर मर जाऊँगा।"

"उस महर्षि ने ही मुझे बताया कि तुम सीताजी का अन्वेषण करते यहाँ पर आओगे और मैं तुम्हारी सहायता कर सकूँगा। तब मेरे पंख फिर से उग आयेंगे, इसलिए मैं यहीं पर रहूँ।"

संपाती यों कह ही रहा था तभी वानरों ने देखा कि उसके पंख उग आये हैं। उन पंखों के पर लाल थे। इस पर संपाती अत्यंत आनंदित हो बोला–"निशाकर महर्षि के कथनानुसार मेरे पंख फिर उग आये हैं। मुझे शक्ति भी प्राप्त हो गई है! इससे स्पष्ट होता है कि तुम लोगों का प्रयत्न अवश्य सफल होगा। मैं अपने पंखों की शक्ति का परीक्षण कर लेता हूँ।" यों कहते संपाती आसमान में उड़ गया।

अमर वाणी

सर्वथा सुकरम् मित्रम्,
दुष्करम् परिपालनम् ;
अनित्यत्वाच्च चित्तानाम्
प्रीति रल्पेपि भिद्यते ॥ १ ॥

[मित्र को प्राप्त करना सरल है, पर मित्रता को बनाये रखना कठिन है। मन स्थिर न रहने की वजह से अल्प कारण के द्वारा भी मित्रता बिगड़ जाती है।]

मित्रम् ह्यर्थगुणश्रेष्ठम्
सत्यधर्मपरायणम्
त द्द्वयं तु परित्यक्तम्
न तु धर्मे व्यवस्थितम् ॥ २ ॥

[सत्य तथा धर्म पर आधारित मित्र अर्थ (धन) से भी महान है। ऐसे मित्र को त्यागने वाला व्यक्ति धर्म को बनाये नहीं रख सकता।]

परोक्षे कार्यहंतारम्,
प्रत्यक्षे प्रियवादिनम्
वर्जये त्तादृशम् मित्रम्
विषकुंभ पयोमुखम् ॥ ३ ॥

[हमारी अनुपस्थिति में हानि करते, समक्ष प्रशंसा करनेवाले मित्र को त्याग देना चाहिए। ऐसा व्यक्ति ऊपर दूध तथा नीचे जहर भरे बर्तन के समान है।]

Photo by S. B. Takalkar
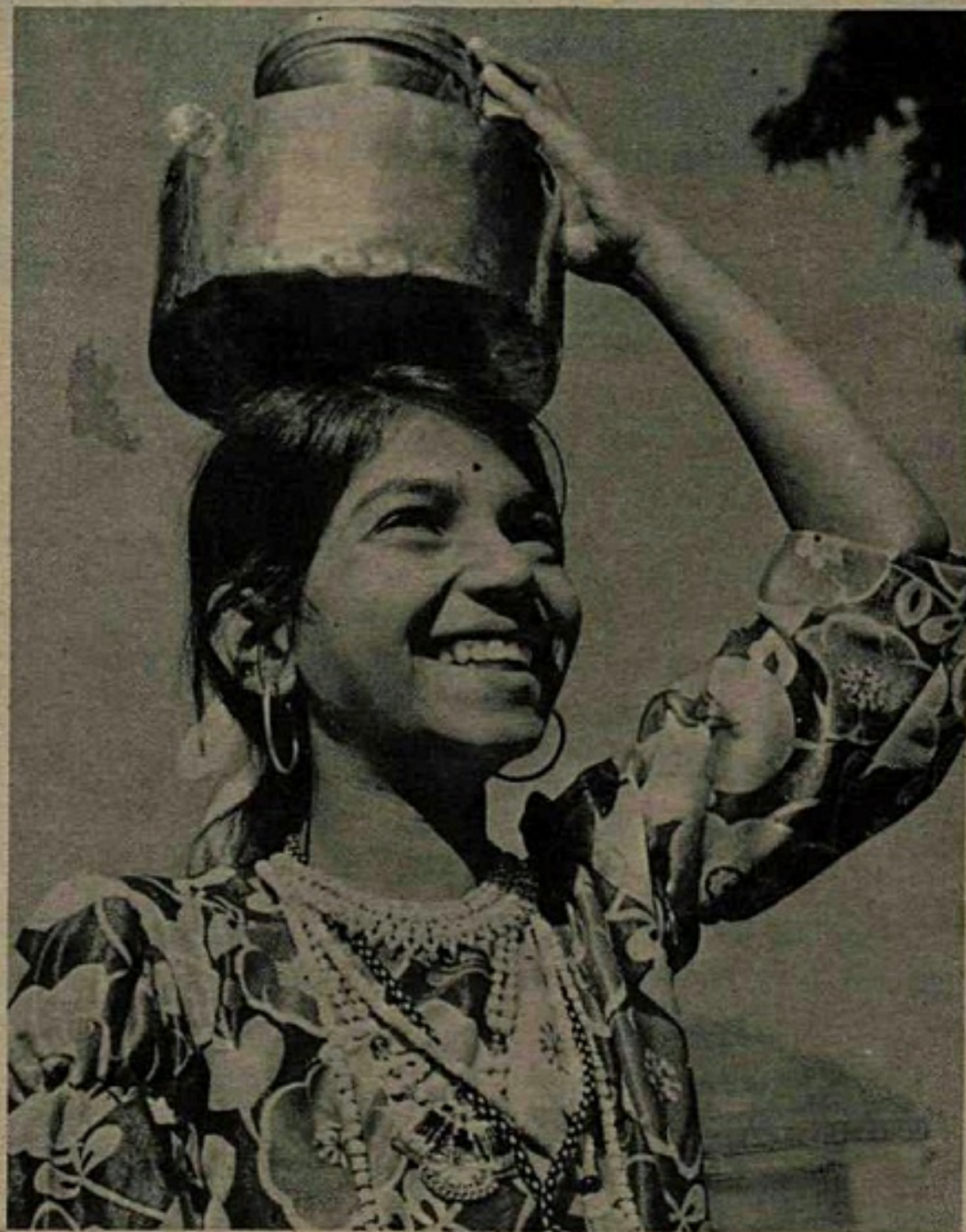
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

जल बिन जीवन कैसा ?

प्रेषक :
समीरन मित्रा

Photo by S. B. Takalkar

क्वार्टर नं. १, ई. एस. ऐ.
डिस्पेन्शरी, नई दिल्ली-१५

बिना बाती के दीपक जैसा

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ जुलाई १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ सितम्बर के अंक में प्रकाशित की जायेंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3. Arcot Road, Madras-600026. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

अपनी रक्षा आप...

डैडी, सुनील ने आज सवेरे मुझे मारा
तुमने वापिस क्यों नहीं मारा? अपनी रक्षा आप करना सीखो!

देखो, घूँसे से बचने के लिए या तो पीछे या बगल हट जाओ या ऐसे झुक जाओ कि वार खाली जाये।

घूँसे को कलाई पर भी रोक सकते हो।

या उसे भुजा या कन्धे पर भी झेल सकते हो।

हाँ ऐसे। 'बॉक्सिंग' यानी अपनी रक्षा आप करने का यह तुम्हारा पहला सबक है।

बाप रे, बड़ी देर हो गयी। चलो सो जाएँ। रोहित, तुमने दाँत तो साफ़ कर लिए हैं न?
डैडी, मैं रोज़ सवेरे तो करता हूँ।

नहीं बेटे, ऐसे नहीं चलेगा। तुम्हें अपने दाँत हर रात और सवेरे साफ़ करने ही चाहिए। इससे दाँतों में फँसे सभी अन्न-कण निकल जाएँगे; दाँतों में सड़न नहीं होगी। तुम्हें मसूढ़ों की भी मालिश करनी चाहिए ताकि वे स्वस्थ और मज़बूत रहें।

चलो, हम दोनों फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से अपने दाँत साफ़ कर लें।
हाँ, डैडी!

Forhans
FOR THE GUMS
फ़ोरहॅन्स
—दाँतों के एक डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट।
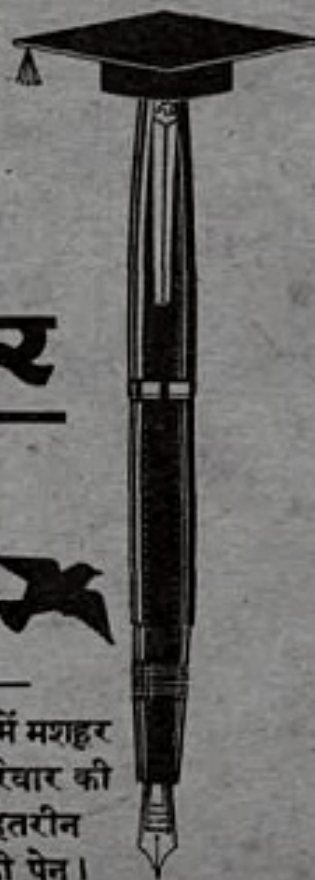
Photo by: N. M. VENKATARAMAN

SNAKES

CHANDAMAMA (Hindi) JULY 1975 Regd. No. M. 5452

मित्र-भेद